CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

# काव्य तरंगिणी

२

डा.जगन्नाथ प्रसाद शर्मा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

# काव्य-तरंगिणी

[ भाग २ ]

श्रेष्ठ आधुनिक कविताओं
का संकलन

संपादक
जगन्नाथप्रसाद शर्मा

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

प्रकाशक :
सरस्वती मंदिर
जतनवर, वाराणसी ।

चतुर्थावृत्ति १९:७
मूल्य : २·५० रुपये

मुद्रक :
विश्वनाथ भार्गव
मनोहर प्रेस, जतनबर, वाराणसी ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

# आमुख

भारतीय इतिहास में सन् १८५७ की क्रांति एक व्यापक परिवर्तन की सूचक है। देश के जीवन में, इसके पश्चात्, बहुत बड़े उलट-फेर हुए। इसी समय के आस-पास हिंदी-साहित्य के आधुनिक युग का प्रवर्त्तन हुआ। यह युग ऐसा था जब पाश्चात्य और भारतीय मान्यताओं एवं संस्कृतियों की मुठभेड़ हो रही थी। विजेता अंगरेजों और विजित भारतीयों में गहरे भेदभाव के चिह्न लक्षित होने लगे थे। एक प्रकार का सामूहिक तथा देशव्यापी जागरण पूर्णतया पनप उठा था। ऐसे समय में साहित्यिक क्रांति के नेता की तरह भारतेंदु (कार्यकाल सन् १८६५–८५) ने चेतना सँभालते ही सारी वस्तुस्थिति परख ली और अपने दायित्व का भाव उनमें पूरी तरह जाग उठा। उन्होंने देखा कि १९ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की सारी दौड़-धूप में हाँफती चली आती व्रजनायिका मूर्च्छित होती जा रही है। प्राचीन काव्य-रीति की चमत्कारविधायक चमकदमक कांतिहीन हो गई है। काव्य का भाव-क्षेत्र श्रृंगार-संकुचित और जन-जीवन से असंपृक्त हो गया है। भारतेंदु ने सबसे पहला काम यह किया कि साहित्य का संबंध लोक-जीवन से जोड़ दिया। काव्य का भाव-क्षेत्र विस्तृत बनाया। युग-प्रेरित राष्ट्रीय भावना और उदार धार्मिक मनोदृष्टि तथा सुधारवादी एवं समन्वयमूलक सांस्कृतिक चेतना का अनेकरूप प्रतिफलन भारतेंदु-युग के काव्य की प्रमुख विशेषता है। व्रजभाषा ही काव्य की भाषा रही, पर पूर्वापेक्षया उसका रूप अधिक स्वाभाविक, परिष्कृत और जनबोध्य हो गया। इस समय खड़ी बोली का भी व्यवहार काव्यक्षेत्र में हुआ, पर प्रयोग रूप में ही। आधिपत्य व्रजभाषा का ही रहा। इस प्रकार भारतेंदु और उनके समकालीन कवियों का कर्तृत्व उनकी कलात्मक उपलब्धियों में उतना नहीं है जितना इस बात में कि उन्होंने काव्य का क्षेत्र विस्तृत बनाया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



और तत्कालीन युग-चेतना के विभिन्न स्तरों का अनेकरूप उद्घाटन किया। काव्य के चमत्कारविधायक रूढ़िगत उपादानों का मोह छोड़कर उन्होंने जीवन के प्राणवान स्वर से साहित्य को संपन्न बनाया।

इस युग की नवचेतना के ज्योतिर्मान केंद्र भारतेंदु थे और अन्य प्रकाशपूर्ण नक्षत्र थे प्रेमघन, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, राधाकृष्णदास आदि।

भारतेंदु की मृत्यु के उपरांत काव्य की भाषाशैली में परिवर्तन की आवश्यकता की ओर कवियों का ध्यान गया। गद्य की भाषा कुछ हो और पद्य की कुछ और, यह बात लोगों को खटकने लगी। काव्य के क्षेत्र में खड़ी बोली की स्वीकृति के संबंध में भारतेंदुकालीन कवियों ने भी थोड़ा ध्यान दिया था, पर कम। खड़ी बोली का पक्ष उस समय दुर्बल था। पर अब खड़ी बोली को काव्य-भाषा बनाने के लिए आंदोलन उठ खड़ा हुआ और अंततः युग की भावनाओं की वाहिका खड़ी बोली को काव्य-भाषा स्वीकार कर लिया गया। नामदेव और कबीर से लेकर नागरीदास तक अनेक कृतिकारों की रचनाओं में खड़ी बोली का यदा-कदा व्यवहार मिलता है; पर उन्नीसवीं शती के अंत और बीसवीं के आरंभ में ही आकर उसे सामान्य काव्य-भाषा होने का संमान मिल सका।

श्रीधर पाठक खड़ी बोली काव्य-परंपरा के पहले महत्त्वपूर्ण कवि हैं जिनकी लावनी छंद में निर्मित 'एकांतवासी योगी' ( गोल्डस्मिथ के 'हरमिट' का अनुवाद ) नामक रचना खड़ी बोली की प्रथम काव्यपुस्तक मानी जाती है। 'श्रांत पथिक' ( गाल्डस्मिथ के 'ट्रैवेलर' का अनुवाद ) इनकी दूसरी प्रसिद्ध कृति है। इन्होंने ब्रजभाषा में भी लिखा। पाठक जी का महत्त्व भाव, भाषा और शैली सभी दृष्टियों से है। आचार्य शुक्ल ने इन्हें हिंदी में सच्चे स्वच्छंदतावाद का प्रवर्तक माना है। स्वच्छंद भावना, प्रकृति के प्रति निश्छल ममत्व का आवेगमय प्रतीति और रहस्यात्मक संकेत—इनके काव्य की कतिपय उल्लेख्य विशेषताएँ हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



खड़ी बोली का रुचिर और परिष्कृत रूप इनमें मिलता है। लावनी, सवैया और रोला जैसे लोकप्रचलित तथा काव्यपरंपरागत छंदों के अतिरिक्त इन्होंने कुछ नए लयात्मक साँचे भी प्रस्तुत किए।

इसी समय 'सरस्वती'-संपादक महावीरप्रसाद द्विवेदी का प्रभाव साहित्य-जगत् में बढ़ा, जिन्होंने खड़ी बोली को काव्य की सामान्य भाषा के रूप में स्वीकार किया और लोगों को इसकी ओर प्रेरित किया। द्विवेदी जी ने रीतिकालीन काव्य-संस्कारों की तीव्र आलोचना की तथा खड़ी बोली काव्य को नये विषयों के ग्रहण के लिए प्रोत्साहित किया। संयम और व्यवस्था के ये पक्के हिमायती थे। भाव और भाषा दोनों में ही इन विशेषताओं का होना ये आवश्यक समझते थे अतः पहला काम इन्होंने खड़ी बोली को व्याकरणसंमत, शुद्ध और परिष्कृत बनाने का किया। इनके प्रभाव से खड़ी बोली का झुकाव संस्कृत वृत्तों और संस्कृतिनिष्ठ पदावली की ओर हुआ। यों सामान्यतः ये बोलचाल की सुबोध भाषा के पक्षपाती थे। भाव के क्षेत्र में भी संयम और व्यवस्था पर विशेष आग्रह का परिणाम यह हुआ कि इनके समय की अधिकांश रचनाएँ नैतिकता से बोझिल, उपदेशपरक और इतिवृत्तात्मक हो गईं।

द्विवेदीजी ने साफ-सुथरी खड़ी बोली में अनेक रचनाएँ करके मार्ग-दर्शन किया। पर इनका कर्तृत्व वस्तुतः स्वयं रचना करने में उतना नहीं है जितना मार्गदर्शन करने और कवि तैयार करने में। मैथिलीशरण गुप्त, रामचरित उपाध्याय और लोचनप्रसाद पांडेय आदि इन्हीं के प्रोत्साहन से चल निकले।

मैथिलीशरण गुप्त ने 'सरस्वती' में लिखना आरंभ किया। इनकी पहली प्रसिद्ध रचना 'भारत भारती' है जो उन्नीसवीं सदी के दूसरे दशक की संभवतः सर्वाधिक लोकप्रिय पद्य-रचना है। इसमें राष्ट्रीयता की भावना इतिहास के तथ्यों पर आधृत होकर सामने आई। हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी—अतीत-गौरव की सूचना,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



वर्तमान ( तत्कालीन ) दुरवस्था का संकेत और भविष्य के लिए प्रेरणा—यही इसका विषय है जिसमें देश की ममता नाना रूपों में वर्णित है। इस विषय-वस्तु का अनेक रूप-विस्तार गुप्त जी की समस्त काव्य-रचना की एक सामान्य विशेषता है। 'साकेत', 'यशोधरा' और 'द्वापर' इनकी विशेष प्रसिद्ध काव्य-कृतियाँ हैं। साकेत में कवि ने रामायण की उपेक्षिता उर्मिला को संमान के पद पर प्रतिष्ठित किया है। इसमें आधुनिक आंदोलनों और वैचारिक नवीनता का पूरा संनिवेश मिलता है। गार्हस्थ्य जीवन के मधुर चित्र भी हैं। कैकेयी के कृत्य को मनोवैज्ञानिक औचित्य प्रदान करने का प्रयत्न नये युग की प्रेरणा का परिणाम है। प्रजा के अधिकार का प्रश्न, श्रमजीवियों के प्रति सहानुभूति, सत्याग्रह का प्रसंग और मानवतावाद की गूँज—समकालीन अनेक स्थितियाँ और भावदशाएँ इस काव्य में आई हैं। प्रबंधात्मकता भी है और गीत भी हैं। कला की दृष्टि से साकेत में नवीन और प्राचीन का अच्छा मेल मिलता है। चमत्कारपूर्ण अलंकृति और छायावादी लाक्षणिक वैचित्र्य दोनों साथ-साथ हैं। 'यशोधरा' बहुत कुछ चंपूकाव्य से मिलता-जुलता रूप लिये आई जिसमें भगवान् बुद्ध के चरित्र से संबद्ध विभिन्न पात्रों के मार्मिक चित्र हैं। यशोधरा का पत्नी, माता और आदर्श नारी के रूप में बड़ा मनोरम और मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है। 'द्वापर' में नाटकीय स्वगत कथन के रूप में कृष्ण से संबद्ध विभिन्न व्यक्तियों—यशोदा, राधा, नारद, कंस आदि के मनोभावों की पृथक्-पृथक् भावमय अभिव्यक्ति हुई है।

गुप्तजी की रचनाओं की संख्या बहुत बड़ी है और उनकी काव्य-वस्तु का विस्तार अनेकमुखी है। रंग में भंग, जयद्रथ-वध, विकट भट, पलासी का युद्ध, गुरुकुल, किसान, पंचवटी, सिद्धराज, जयभारत आदि उनके प्रबंध-काव्य हैं। वैतालिक, झंकार आदि गीतात्मक रचनाएँ हैं। कई पद्यबद्ध रूपक भी इन्होंने लिखे हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



आचार्य शुक्ल के शब्दों में 'गुप्तजी की प्रतिभा की सबसे बड़ी विशेषता है कालानुसरण की क्षमता अर्थात् उत्तरोत्तर बदलती हुई भावनाओं और काव्य-प्रणालियों को ग्रहण करते चलने की शक्ति।'

खड़ी बोली को परिष्कृत और व्यंजक बनाने में गुप्त जी का योग महत्त्वशाली रहा है। युग-प्रवृत्ति के विकासमान रूप को उन्होंने अपने काव्य में असाधारण प्रतिभा के बल पर मार्मिक ढंग से व्यंजित किया है। अनेक जीवन-स्थितियों की मार्मिक व्यंजना इनकी विशिष्ट रचनाओं में मिलती है। उच्च जीवनादर्श और विचारगत औदात्य इनके व्यक्तित्व के अविच्छेद्य गुण हैं।

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में ही काव्य-रचना करने लगे थे। आरंभ से ही इनकी रुझान नये सामाजिक विषयों की ओर रही। इनकी सबसे प्रसिद्ध रचना 'प्रियप्रवास' है जो संस्कृत के अनुकांत वृत्तों में है और जिसमें लोकसंग्रह के भाव और युगानुरूप बौद्धिकता का अच्छा समावेश है। इसमें कृष्ण व्रज के लोक-रक्षक नेता और राधा लोकसेविका के रूप में चित्रित हैं। स्मृतिरूप में प्रस्तुत होने से इसके कथाबंध में एक नाटकीय वैशिष्ट्य आ गया है। विप्रलंभ शृंगार और वात्सल्य भाव की 'प्रियप्रवास' में सुंदर व्यंजना हुई है। पदावली कहीं संस्कृतगर्भित है और कहीं सरल मधुर हिंदी की छटा से भरी है। इनका दूसरा प्रबंध-काव्य 'वैदेही वनवास' है।

खड़ी बोली, ठेठ हिंदी, उर्दू-मिश्रित हिंदी, संस्कृतनिष्ठ हिंदी और व्रजभाषा—इन सब पर हरिऔध का समान अधिकार पाया जाता है। 'रसकलश' उनकी व्रजभाषा की रचना है जिसमें प्राचीन नायिका-रूपों के अतिरिक्त देश-प्रेमिका और लोकसेविका आदि के नये नायिका-रूप भी सामने लाए गए हैं। इसमें विभिन्न रसों की अभिव्यक्ति है और व्रजभाषा का प्रौढ़ तथा परिष्कृत रूप प्रस्तुत किया गया है। 'चौखे चौपदे', 'चुभते चौपदे' और 'बोलचाल' में ठेठ हिंदी और मुहावरों की बंदिश का चमत्कार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



द्रष्टव्य है। इस प्रकार ब्रजभाषा और खड़ीबोली हिंदी के विभिन्न रूपों के ऊपर जैसा व्यापक अधिकार हरिऔध का लक्षित होता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। लोकभावना-प्रेरित नये भाव, सरल और क्लिष्ट हिंदी-पदावली का अनूठा विनियोग तथा कोमलकांत पदावली के प्रति विशेष आग्रह इनकी कुछ प्रसिद्ध विशेषताएँ हैं।

आधुनिक काव्य के द्वितीय उत्थान में अनेक कवि मैदान में आए। द्विवेदी जी के प्रभाव में रहकर लिखनेवालों में 'रामचरित-चिंतामणि' के रचयिता रामचरित उपाध्याय, गिरिधर शर्मा नवरत्न और लोचनप्रसाद पांडेय आदि उल्लेखनीय हैं। स्वतंत्र रूप से काव्य-रचना करनेवालों में राय देवीप्रसाद 'पूर्ण', नाथूराम शर्मा 'शंकर', गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', सत्यनारायण कविरत्न, लाला भगवानदीन, रामनरेश त्रिपाठी और रूपनारायण पांडेय आदि विशिष्ट हैं। इन सबने खड़ी बोली को माँजने और विभिन्न प्रकार के भावों को अभिव्यक्त करने के लिए समर्थ बनाने में बड़ा काम किया।

इस समय की रचनाओं में सामाजिक और राष्ट्रीय भावना का प्रसार हुआ, काव्य-भूमि पहले की अपेक्षा विस्तृत हुई, सुधार की प्रवृत्ति अधिक ब्यौरे के साथ व्यक्त हुई, पर भावाभिव्यंजन का सम्यक् रूप नहीं उपस्थित हो सका। भाषा को माँजकर उसमें भाव-संचार की पूरी क्षमता लाने में ही अधिक समय बीता। दूसरे, व्याकरण के कठोर अंकुश और स्थूल नैतिकता के नियंत्रण के कारण काव्य में कल्पना अच्छी तरह खिल न सकी।

सन् '१८ के आसपास कवियों का ध्यान इस न्यूनता की ओर गया। द्विवेदी जी के प्रभावकाल की कविताओं की गद्यात्मक रूक्षता, इतिवृत्तात्मकता, वाह्यनिरूपार्थक प्रवृत्ति और स्थूल नैतिकता के प्रति कठोर आग्रह आदि के विरुद्ध व्यापक प्रतिक्रिया हुई और आधुनिक काव्य के तृतीय युग का आरंभ हुआ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



इस नवीन काव्य-चेतना का आरंभिक स्फुरण मैथिलीशरण गुप्त और मुकुटधर पांडेय की तत्कालीन कविताओं में दिखाई पड़ता है। पर प्रसाद, पंत और निराला आदि की कृतियों में नये काव्य का वास्तविक वाग्वैभव नया नाम और रूप धारण कर अच्छी तरह स्फुट हुआ।

आधुनिक काव्य के तृतीय उत्थान में विविध प्रकार की प्रवृत्तियों का प्रसार दिखाई पड़ा। प्रथम उत्थान में हिंदी-काव्य युगचेतना से संपृक्त हुआ था। द्वितीय में प्रवर्द्धित युगचेतना अधिक स्पष्ट और वैविध्यपूर्ण स्वरों में खड़ी बोली के माध्यम से व्यक्त हुई। इस तृतीय उत्थान में पूर्ववर्ती भावधारा के साथ नवागत भावनाएँ भी आ मिलीं और पहले की अपेक्षा अधिक काव्योचित कला-सौष्ठव के साथ व्यंजित हुईं।

देशप्रेम की, पहले से चली आती हुई, प्रवृत्ति क्रमशः प्रबल होती गई और माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन तथा रामधारीसिंह दिनकर आदि में इसका अच्छा अनुरणन हुआ। इनकी रचनाओं में राष्ट्रीयता की भावना और परिवर्तन की कामना वेगपूर्ण ढंग से व्यंजित हुई।

द्विवेदी-काल में प्रवर्तित विविध विषयों को ग्रहण कर चलनेवाली धारा मैथिलीशरण गुप्त, गोपालशरण सिंह और अनूप शर्मा आदि के द्वारा अग्रसर रही।

पर सबसे जीवंत धारा इस युग की वह है जिसे 'छायावाद' के नाम से अभिहित किया जाता है। द्विवेदी-कालीन काव्य की गद्यात्मक रूक्षता और बाह्यार्थनिरूपक प्रवृत्ति के विरोध में एक नये ढंग के काव्य का प्रचलन हुआ जिसमें पहले तो काव्य-शैली के वैलक्षण्य पर ही अधिक बल दिया गया पर आगे चलकर विषय-संबंधी वैविध्य और नवीनता की ओर भी कवियों की दृष्टि गई। आरंभ में बँगला के नये काव्य और अँगरेजी के रोमैंटिक काव्य का छायावादियों पर अत्यधिक प्रभाव लक्षित होता है। पर आगे चलकर बाह्य प्रभाव समाप्त हो गया और हिंदी कवि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



का समृद्ध और सशक्त स्व-भाव ही युगानुरूप साजसज्जा के साथ अनेक रूप-रंगों में अभिव्यक्त हुआ।

विचार करने पर छायावाद में वस्तु और शैली दोनों की नवीनता लक्षित होती है। योरप में उन्नीसवीं सदी से ही जिस व्यक्तिवाद का विकास काव्य में हो रहा था उसका आवेगमय रूप हिंदी के छायावादी काव्य में प्रकट हुआ। फलतः व्यक्ति के महत्त्व का नाना रूप प्रदर्शन इस प्रकार के काव्य में मिलता है। सामाजिक परंपराओं से असंतोष और विद्रोह का भाव छायावाद में बड़े तीव्र रूप से व्यक्त हुआ। व्यक्ति की अपनी भावना, मुक्ति-कामना, आशा-आकांक्षा और निराशा तथा वेदना का जैसा आवेगमय और साहसपूर्ण अभिव्यंजन 'छायावाद' में दिखाई पड़ा वैसा पूर्ववर्ती काव्य के लिए अपरिचित था। मानवतावाद के प्रभाव से दीन-हीन और संत्रस्त व्यक्तियों के प्रति ममत्व भी व्यंजित हुआ। कवियों के सौंदर्यमूलक भावबोध की गहराई के कारण प्रकृति और मानव-क्षेत्र से चुने गये अनेकस्तरीय सौंदर्य-चित्रों का बड़ा ही मनोरम प्रदर्शन छायावादी काव्य में हुआ। सौंदर्य और माधुर्य की खोज में अनेक बार कवियों को विषम कर्मजगत् की कठोरता से पलायन भी करना पड़ा और कल्पनालोक में आश्रय भी लेना पड़ा।

शैली की दृष्टि से भी इस नये काव्य में अनेक विशेषताएँ प्रस्फुट हुईं। व्यक्तिनिष्ठ भावनाओं की वेगवती व्यंजना करनेवाले प्रगीत छायावाद की अपनी अभिनव सृष्टि हैं। विराट् और कोमल-मधुर व्यंजक चित्र-विन्यास में छायावादियों की कल्पना खूब सजग दिखाई देती है। प्रतीक व्यंजना, लाक्षणिक मूर्तिमत्ता, भाषा की वक्रता और कोमल पदावली इस काव्य की अन्य शैलीगत विशेषताएँ हैं। मुक्तछंद की सृष्टि भी इसी समय हुई।

प्रसाद, पंत और निराला छायावाद के प्रवर्त्तक और उपासक हैं। बाद को महादेवी ने भी इस क्षेत्र में प्रवेश कर ऊँचा स्थान प्राप्त किया।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



जयशंकर प्रसाद का मुख्य काव्य-विषय मानवीय प्रेम है जिसके अनेक स्तरों का उद्‌घाटन इनकी रचनाओं में अत्यंत मार्मिक पद्धति पर हुआ। संयोग और वियोगकालीन भावनाओं तथा प्रेम के उदात्त और उन्नयनकारी रूप का 'आँसू' में अच्छा उद्‌घाटन मिलता है। 'लहर' की रचनाओं में आवेगमय प्रेम की प्रतीति करानेवाली यौवनोचित अल्हड़ता का लयकारी रूप भी मिलता है और अतीत के क्षेत्र में प्रवेश करनेवाली कल्पना का भावोद्रेकक्षम विधान भी। नाटकों में ग्रथित इनके प्रगीतों में संगीत तत्त्व, कल्पना की भावोद्रेकक्षमता और आभ्यंतर भावों की सघनता का अनूठा विनियोग दिखाई पड़ता है। इनका सबसे प्रसिद्ध काव्य 'कामायनी' है जिसमें कवि की विशद् कल्पना और भावगत औदात्य का सुंदर रूप प्रकट हुआ है। 'कामायनी' में आदि मानव मनु के द्वारा सृष्टि की पुनर्रचना का आख्यान निबद्ध है। ऐतिहासिकता और रूपक तत्त्व का इसमें बड़े कौशल से निर्वाह हुआ है। मानवी सभ्यता के विविध सोपानों और विभिन्न मानसिक स्थितियों की प्रगीतात्मक व्यंजना इस काव्य में बड़े मार्मिक ढंग से हुई है। कथा का बाह्य-प्रसार कम है; पर अन्तः प्रसार तलस्पर्शी है। रंजनकारी मूर्तिविधायक कल्पना और जटिल भावों की संवेद्य व्यंजना के अतिरिक्त जीवन के प्रति जिस सामंजस्यमूलक जीवन-दृष्टि को अग्रसर किवा है उसका भी विशेष महत्त्व समझना चाहिए।

सुमित्रानंदन पंत सौंदर्य-कल्पना के सुकुमार कवि के रूप में काव्य-क्षेत्र में प्रविष्ट हुए। प्रकृति के मधुर रूपों के साथ जैसा आत्मीय संबंध इनका रहा है वैसा अन्य किसी हिंदी कवि का नहीं। इनकी रचनाओं में प्रकृति की अत्यंत रमणीय चित्रशाला सुसज्जित है। प्रकृति को इन्होंने एक चेतन-सत्ता के रूप में भी देखा है जो कवि के लिए सहानुभूतिशील मित्र और प्रेरणादायक शक्ति के समान है। 'प्रकृति के विभिन्न स्थिर और गतिमय रूपों की इन्होंने ऐसी योजना की है जो प्रायः अनेक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



इंद्रियानुभूतियों को एक साथ उद्दीप्त कर देती है।' प्रेममूलक अनेकानेक वृत्तियों का स्फुरण इनकी रचनाओं की अन्य विशेषता है। सामंजस्य और विश्ववंधुत्व की जो भावना प्रसाद में मिलती है उसका प्रसार पंत की रचनाओं में अपने ढंग से हुआ है। 'गुंजन' में इस प्रकार की प्रवृत्ति प्रायः दिखाई देती है। पंत उच्चकोटि के कलाकार हैं, अतः इनके शैली-शिल्प में वैसी ही परिष्कृति और प्रत्यग्रता भी है। स्निग्ध और चित्रमयी भाषा तथा लाक्षणिक वैचित्र्य का चमत्कार इनमें विशेष है। वर्तमान शती के चौथे दशक में मार्क्सवादी विचारधारा के प्रचलन के समय पंतजी उससे भी प्रभावित हुए और अपने द्वारा संपादित 'रूपाभ' में उन्होंने घोषणा की कि 'इस युग की कल्पना स्वप्नों में नहीं पल सकती। उसकी जड़ों को अपनी पोषण-सामग्री धारण करने के लिए कठोर धरती का आश्रय लेना पड़ रहा है।' फलतः ये भौतिकता और सामाजिक वैषम्य की कठोरता आदि का पता देनेवाली रचनाओं की ओर प्रवृत्त हुए जिनका प्रथम संकलन 'युगवाणी' में हुआ। पर द्वंद्व और संघर्ष की कठोरता में इनका मन देर तक टिका न रह सका। इसी समय अरविंद-दर्शन से प्रभावित हो मन के ऊर्ध्वगमन और आध्यात्मिक-सांस्कृतिक उन्नयन की ओर इनकी चिंतनधारा प्रवाहित हुई। अब भी वह प्रभाव बना है, पर इधर दर्शन और चिंतन के अतिरेक को छोड़ अब पुनः सहृदय कवि की प्रकृत भूमि पर आ गए हैं। 'अतिमा', 'वाणी' आदि इधर के संग्रहों में कवि की उत्कृष्ट काव्य-प्रतिभा का मनोरम रूप प्रकट हुआ है। इनमें पंत की भावुक कल्पना के साथ चिंतन की गरिमा का अच्छा योग दिखाई देता है।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावादियों के बीच सबसे विद्रोही कवि रहे हैं। विद्रोह सामाजिक बंधनों और ढोंगों से भी तथा साहित्यिक रूढ़ियों से भी। उनका पौरुषशील विद्रोह कहीं सामाजिक व्यंग्य-विद्रूप के रूप में प्रकट हुआ है, कहीं ललकार के रूप में और कहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



नये ढंग की पद-योजना और छंद-विधान की उद्भावना में। आरंभ से ही अपने सहयोगियों की अपेक्षा इनका भाव-क्षेत्र विस्तृत रहा है। सामाजिक वैषम्य, जर्जर रूढ़ियों, पराधीनता आदि के विरुद्ध क्रांति का संदेश इनकी आरंभिक रचनाओं में भी मिलता है। जितना ऊँचा स्वर पौरुष का है उतना ही तीखा स्वर निराशा और विषाद का भी है जो निराला जैसे परिपूर्ण स्वच्छंदतावादी कवि के लिए स्वाभाविक ही था। उनकी कुछ रचनाओं में भावुक भक्त की दीनता और सरलता है तो कुछ में अद्वैत दर्शन की बौद्धिकता भी। आध्यात्मिक प्रेम की बात छोड़ दें तो मानवीय प्रेम-प्रसंगों में निर्भीक शृंगार-भावना इनमें अधिक दिखाई देती है। इनका 'अंतर्मुख प्रबंधकाव्य' 'तुलसीदास' एक भिन्न कोटि की रचना है जिसमें कथातत्त्व अत्यल्प है और सांस्कृतिक परिवेश तथा मानसिक आंदोलन का वर्णन विशेष। निराला ने विषय और शैली के क्षेत्र में अनेकानेक प्रयोग किए। हिंदी में मुक्त छंद के पुरस्कर्ता ये ही हैं। संगीत तत्त्व के अनेकरूप काव्यगत प्रयोग इन्होंने किए। गुंफित पदयोजना तथा क्रियापदलोप की प्रवृत्ति के कारण इनकी रचनाओं में कहीं-कहीं बड़ी दुरूहता आ गई है।

महादेवी जी प्रधानतः प्रेममूलक वेदना और करुणा की कवयित्री हैं। प्रेम के वियोग पक्ष में नारीसुलभ प्रगल्भता और वाक्चातुर्य का मनोहारी प्रयोग इनमें मिलता है। वेदना और दुःख इन्हें पराजित नहीं करते, बल्कि एक विशेष प्रकार के तेज से अभिमंडित कर देते हैं। इनका प्रेम अपार्थिव सत्ता या परमप्रियतम के प्रति है। अतः प्रेम नष्ट अद्वैतवादी रहस्यवाद की झलक इनमें मिलती है पर अपनी पृथक् सत्ता बनाए रखकर परम प्रियतम से प्रेम-क्रीड़ा की आकांक्षा कवयित्री ने अधिक व्यक्त की है। यद्यपि कुछ रचनाओं में सामाजिक और राष्ट्रीय भावनाएँ भी झलक उठती हैं पर इनकी अधिकांश कविताएँ अज्ञात प्रियतम के प्रति प्रेममयी संवेदनाओं से ही संबद्ध हैं। इस प्रकार इनका

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



काव्य-विषय सीमित है पर इस सीमित क्षेत्र में जो अर्थच्छाया और कलात्मक वैशिष्ट्य इन्होंने प्रदर्शित किया है वह अप्रतिम है। इनके गीतों में अत्यंत उच्चकोटि का संगीत और लयात्मक वैशिष्ट्य पाया जाता है। भाषा बड़ी चित्रोत्थापक, प्रांजल, पदावली स्निग्ध, मधुर तथा व्यंजक है।

भावों की तीव्रता और कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से छायावाद आधुनिक काव्य का सर्वोत्तम काल रहा है। पर धीरे-धीरे इसकी सीमा-रेखाएँ संकुचित होती गईं। अवसाद, निराशा और काल्पनिकता की मात्रा बढ़ती गई। इसी समय विचार-क्षेत्र में मार्क्सवादी भावनाओं का प्रभाव बढ़ा और वर्तमान शताब्दी के चौथे दशक के प्रायः अंत में एक नयी काव्य-प्रवृत्ति का उदय हुआ जिसे 'प्रगतिवाद' के नाम से अभिहित किया गया। माक्स के द्वंद्वात्मक भौतिकवाद से प्रभावित इस नयी काव्यधारा में यथार्थवादी प्रवृत्ति पर विशेष बल था। सामाजिक वैषम्य, वर्ग-संघर्ष, सर्वहारावर्ग के संगठन और क्रांति की भावना आदि का अनेकरूप चित्रण इस प्रकार के काव्य में हुआ। वस्तुतः प्रगतिवाद में उपयोगिता की दृष्टि से साहित्यिक सृष्टि भी होने लगी और साहित्य को सामाजिक क्रांति के एक अस्त्र के रूप में स्वीकार किया गया। फलतः इस प्रकार के काव्य में काव्यगत औदात्य और कलात्मक उत्कर्ष की संभावना कम थी। इसीलिए प्रगतिवाद स्थायी महत्त्व की साहित्यिक कृतियाँ नहीं प्रदान कर सका। प्रगतिवाद का विशेष महत्त्व इस बात में है कि उसने साहित्य के समाज-सापेक्ष मूल्यों पर बल देकर यथार्थमूलक काव्य-चेतना को जगाने का प्रयास किया। आरंभ में सुमित्रानंदन पंत इस ओर मुड़े और 'युगवाणी' तथा 'ग्राम्या' नामक इनके दो संग्रहों में इस नये यथार्थवादी दृष्टिकोण का प्राधान्य दिखाई पड़ा। इनके अतिरिक्त केदारनाथ अग्रवाल, रांगेय राघव, शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि अन्य कवि इस धारा में उल्लेख्य हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



प्रायः प्रगतिवाद के आरंभ के समय ही फ्रायड की अंतश्चेतना-संबंधी मान्यताओं और प्रथम महायुद्ध की उत्तरकालीन यूरोपीय विचार-धाराओं से प्रभावित हिंदी-कवियों का एक दल और उठ खड़ा हुआ जो आगे चलकर प्रयोगवादी कहलाया। सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' इनमें सर्वप्रमुख हैं। इस धारा के अन्य कवि शमशेर, धर्मवीर भारती आदि हैं। इन कवियों ने काव्य में शैली-शिल्प संबंधी अनेक प्रकार के नये-नये प्रयोग किए।

नयी सामाजिक स्थितियों और वैज्ञानिक प्रगति के फलस्वरूप उगती हुई नयी संवेदनाओं के उद्घाटन का प्रयास, खंड-जीवन के महत्त्व का प्रतिपादन, नये जीवन-सत्य के अन्वेषण का प्रयत्न, व्यक्ति-जीवन की लाचारी और कुंठा आदि की अभिव्यक्ति के साथ व्यक्ति के महत्त्व का अनेक रूप प्रदर्शन तथा भाषा, लय और छंद संबंधी चमत्कारपूर्ण नये प्रयोग इस नयी धारा की कुछ संलक्ष्य विशेषताएँ हैं।

इन प्रमुख धाराओं के अतिरिक्त आधुनिक काव्य में और भी प्रवृत्तियाँ अग्रसर हैं। हरिवंशराय बच्चन, जो पहले मधुमत्त कवि के रूप में प्रसिद्ध हुए थे, इधर लोक-संपृक्त भावनाओं को बड़ी साफ-सुथरी और सरल, पर अत्यंत व्यंजक खड़ी बोली के माध्यम से गीतात्मक साँचों में असाधारण क्षमता से ढाल रहे हैं। विभिन्न विषयों पर गीतात्मक रचना करने वाले कवियों का एक अलग समूह ही है जो अच्छा कार्य कर रहा है।

इस प्रकार हिंदी का वर्तमान काव्य नवोन्मेषपूर्ण रचना-शक्ति से संपन्न और पूर्णतः गतिमान है।

—जगन्नाथप्रसाद शर्मा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

# विषय-सूची


| लेखक | | | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| १. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' | ... | | १–१५ |
| प्रिय प्रवास | | | |
| चौपदे | | | |
| २. मैथिलीशरण गुप्त | ... | ... | १६–३७ |
| कैकेयी का अनुताप | | | |
| ऊर्मिला–लक्ष्मण–मिलन | | | |
| यशोधरा–विरह | | | |
| कंस | | | |
| ३. जयशंकर 'प्रसाद' | ... | ... | ३८–५९ |
| श्रद्धा | | | |
| वे कुछ दिन कितने सुंदर थे | | | |
| ले चल वहाँ भुलावा देकर | | | |
| हे सागर संगम अरुण नील ! | | | |
| अशोक की चिंता | | | |
| आँसू | | | |
| ४. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' | ... | | ६०–७१ |
| भर देते हो | | | |
| मौन रही हार | | | |
| भावना रँग दी तुमने प्राण | | | |
| धारा | | | |
| कौन तुम शुभ्र-किरण-वसना ? | | | |
| २ | | | |


Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



स्नेह निर्झर बह गया है
संध्या सुंदरी
बादल राग

५. सुमित्रानंदन पंत ... ... ७२–९५
प्रार्थना
पर्वत प्रदेश में पावस
शिशु
आँसू से
नौका-विहार
चाँदनी
तितली
सुमन के प्रति
रूप सत्य
सोनजुही

६. महादेवी वर्मा ... ... ९६–१०४
गीतावली

७. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ... १०५–११६
पहला दौंगरा
उषःकाल की भव्य शांति
यह दीप अकेला
कतकी पूनो
नदी के द्वीप
चेहरे असंख्य : आँखें असंख्य
मैंने देखा, एक बूँद

८. टिप्पणी ... ... १–१०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

## प्रियप्रवास

मैं हूँ ऊधा पुलकित हुई आपको आज पा के।
संदेशों को श्रवण करके और भी मोदिता हूँ॥
मंदीभूता, उर-तिमिर की ध्वंसिनी ज्ञान-आभा।
उद्दीप्ता हो उचित-गति से उज्ज्वला हो रही है॥१॥

मेरे प्यारे, पुरुष, पृथिवी-रत्न और शांतधी हैं।
संदेशों में तदपि उनकी, वेदना, व्यंजिता है॥
मैं नारी हूँ, तरल-उर हूँ, प्यार से वंचिता हूँ।
जो होती हूँ विकल, विमना, व्यस्त, वैचित्र्य क्या है॥२॥

हो जाती है रजनि मलिना ज्यों कला-नाथ डूबे।
वाटी शोभा रहित बनती ज्यों वसंतांत में है॥
त्योंही प्यारे विधु-वदन की कांति से वंचिता हो।
श्री-हीना औ मलिन व्रज की मेदिनी हो गई है॥३॥

जैसे प्रायः लहर उठती वारि में वायु से है।
त्योंहीं होता चित चलित है कश्चिदावेग-द्वारा॥
उद्वेगों से व्यथित बनना बात स्वाभाविकी है।
हाँ, ज्ञानी औ विबुध-जन में मुह्यता है न होती॥४॥

पूरा-पूरा परम-प्रिय का मर्म मैं बूझती हूँ।
है जो वाँछा विशद उर में जानती भी उसे हूँ॥
यत्नों द्वारा प्रति-दिन अतः मैं महा संयता हूँ।
तो भी देती विरह-जनिता-त्रासनाएँ व्यथा हैं॥५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



जो मैं कोई विहग उड़ता देखती व्योम में हूँ।
तो उत्कंठा-विवश चित में आज भी सोचती हूँ॥
होते मेरे अबल तन में पक्ष जो पक्षियों से।
तो यों ही मैं स-मुद उड़ती श्याम के पास जाती ॥६॥

जो उत्कंठा अधिक प्रबला है किसी काल होती।
तो ऐसी है लहर उठती चित्त में कल्पना की॥
जो हो जाती पवन, गति पा वांछिता लोक-प्यारी।
मैं छू आती परम-प्रिय के मंजु-पादांबुजों को ॥७॥

निर्लिप्ता हूँ अधिकतर मैं नित्यशः संयता हूँ।
तो भी होती अति व्यथित हूँ श्याम की याद आते॥
वैसी वांछा जगत-हित की आज भी है न होती।
जैसी जी में ललित प्रिय के लाभ की लालसा है ॥८॥

हो जाता है उदित उर में मोह जो रूप-द्वारा।
व्यापी भू में अधिक जिसकी मंजु-कार्यावली है॥
जो प्रायः है प्रसव करता मुग्धता मानसों में।
जो है क्रीड़ा अवनि चित को भ्रांति उद्विग्नता का ॥९॥

जाता है पंच-शर जिसकी 'कल्पिता-मूर्ति' माना।
जो पुष्पों के विशिख-बल से विश्व को वेधता है॥
भाव-ग्राही मधुर-महती चित्त-विक्षेप-शीला।
न्यारी-लीला सकल जिसकी मानसोन्मादिनी है ॥१०॥

वैचित्र्यों से वलित उसमें ईदृशी शक्तियाँ हैं।
ज्ञाताओं ने प्रणय उसको है बताया न तो भी॥
है दोनों से सबल बनती भूरि-आसंग-लिप्सा।
होती है किंतु प्रणयज ही स्थायिनी औ प्रधाना ॥११॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



जैसे पानी प्रणय तृषितों की तृषा है न होती।
हो पाती है न क्षुधित-क्षुधा अन्न-आसक्ति जैसे॥
वैसे ही रूप निलय नरों मोहनी-मूर्तियों में।
हो पाता है न 'प्रणय' हुआ मोह रूपादि-द्वारा॥१२॥

मूली-भूता इस प्रणय की बुद्धि की वृत्तियाँ हैं।
हो जाती हैं समधिकृत जो व्यक्ति के सद्गुणों से॥
वे होते हैं नित नव, तथा दिव्यता-धाम, स्थायी।
पाई जाती प्रणय-पथ में स्थायिता है इसीसे॥१३॥

हो पाता है विकृत स्थिरता-हीन है रूप होता।
पाई जाती नहिं इसलिये मोह में स्थायिता है॥
होता है रूप विकसित भी प्रायशः एक ही सा।
हो जाता है प्रशमित अतः मोह संभोग से भी॥१४॥

नाना स्वार्थों सरस-सुख की वासना-मध्य डूबा।
आवेगों से वलित ममतावान है मोह होता॥
निष्कामी है प्रणय-शुचिता-मूर्ति है सात्त्विकी है।
होती पूरी प्रमिति उसमें आत्म-उत्सर्ग की है॥१५॥

सद्यः होती फलित, चित में मोह की मत्तता है।
धीरे-धीरे प्रणय बसता, व्यापता है उरों में॥
हो जाती हैं विवश अपरा-वृत्तियाँ मोह-द्वारा।
भावोन्मेषी प्रणय करता चित्त सद्वृत्ति को है॥१६॥

हो जाते हैं उदय कितने भाव ऐसे उरों में।
होती है मोह-वश जिनमें प्रेमी की भ्रांति प्रायः॥
वे होते हैं न प्रणय न वे हैं समीचीन होते।
पाई जाती अधिक उनमें मोह की वासना है॥१७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



हो के उत्कंठ प्रिय-सुत की भूयसी-लालसा से।
जो है प्राणी हृदय-तल की वृत्ति उत्सर्ग-शीला॥
पुण्याकांक्षा सुयश-रुचि वा धर्म-लिप्सा बिना ही।
ज्ञाताओं ने प्रणय अभिधा दान की है उसी को॥१८॥

आदौ होता गुण ग्रहण है उक्त सद्वृत्ति-द्वारा।
हो जाती है उदित उर में फेर आसंग-लिप्सा॥
होती उत्पन्न सहृदयता बाद संसर्ग के है।
पीछे खो आत्म-सुधि लसती आत्म-उत्सर्गता है॥१९॥

सद्गंधों से मधुर-स्वर से, स्पर्श से औ रसों से।
जो हैं प्राणी हृदय-तल में मोह उद्भूत होते॥
वे ग्राही हैं जन-हृदय के रूप में मोह ही से।
हो पाते हैं तदपि उतने मत्तकारी नहीं वे॥२०॥

व्यापी भी है अधिक उनसे रूप का मोह होता।
पाया जाता प्रबल उसका चित्त-चांचल्य भी है॥
मानी जाती न क्षिति-तल में है पतंगोपमाना।
भृंगों, मीनों, द्विरद मृग की मत्तता प्रो।तमत्ता॥२१॥

मोहों में है प्रबल सबसे रूप का मोह होता।
कैसे होंगे अपर, वह जो प्रेम है हो न पाता॥
जो है प्यारा प्रणय-मणि सा काँच सा मोह तो है।
ऊँची न्यारी रुचिर महिमा मोह से प्रेम की है॥२२॥

दोनों आँखें निरख जिसको तृप्त होती नहीं हैं।
ज्यों-ज्यों देखें अधिक जिसकी दीखती मंजुता है॥
जो है लीला-निलय महि में वस्तु स्वर्गीय जो है।
ऐसा राका-उदित-विधु सा रूप उल्लासकारी॥२३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



उत्कंठा से बहु सुन जिसे मत्त सा बार लाखों।
कानों की है न तिल भर भी दूर होती पिपासा॥
हृत्तंत्री में ध्वनित करता स्वर्ग-संगीत जो है।
ऐसा न्यारा-स्वर उर-जयी विश्व-व्यामोहकारी॥२४॥

होता है मूल अग जग के सर्वरूपों-स्वरों का।
या होती है मिलित उसमें मुग्धता सद्गुणों की॥
ये बातें ही विहित-विधि के साथ हैं व्यक्त होती।
न्यारे गंधों सरस-रस, औ स्पर्श-वैचित्र्य में भी॥२५॥

पूरी-पूरी कुँवर-वर के रूप में है महत्ता।
मंत्रों से हो मुखर, मुरली दिव्यता से भरी है॥
सारे न्यारे प्रमुख-गुण की सात्विकी मूर्त्ति वे हैं।
कैसे व्यापी प्रणय उनका अंतरों में न होगा॥२६॥

जो आसक्ता व्रज-अवनि में बालिकाएँ कई हैं।
वे सारी ही प्रणय-रँग से श्याम के रंजिता हैं॥
मैं मानूँगी अधिक उनमें हैं महा-मोह-मग्ना।
तो भी प्रायः प्रणय-पथ की पंथिनी ही सभी हैं॥२७॥

मेरी भी है कुछ गति यही श्याम को भूल दूँ क्यों।
काढ़ूँ कैसे हृदय-तल से श्यामली-मूर्ति न्यारी॥
जीते जी जो न मन सकता भूल है मंजु तानें।
तो क्यों होगा शमित प्रिय के लाभ की लालसाएँ॥२८॥

ये आखें हैं जिधर फिरतीं चाहतीं श्याम को हैं।
कानों को भी मधुर-रव की आज भी लौ लगी है॥
कोई मेरे हृदय-तल को पैठ के जो विलोके।
तो पावेगा लसित उसमें कांति-प्यारी उन्हीं की॥२९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



जो होता है उदित नभ में कौमुदी-कांत आ के।
या जो कोई कुसुम विकसा देख पाती कहीं हूँ॥
शोभा वाले हरित दल के पादपों को विलोके।
है प्यारे का विकच-मुखड़ा आज भी याद आता॥३०॥

कालिंदी के पुलिन पर जा, या सजीले-सरों में।
जो मैं फूले कमल-कुल को मुग्ध हो देखती हूँ॥
तो प्यारे के कलित-कर की औ अनूठे पगों की।
छा जाती है सरस-सुषमा वारि-स्रावी दृगों में॥३१॥

ताराओं से खचित-नभ को देखती जो कभी हूँ।
या मेघों में मुदित-वक की पंक्तियाँ दीखती हैं॥
तो जाती हूँ उमग बँधता ध्यान ऐसा मुझे है।
मानों मुक्ता-लसित-उर है श्याम का दृष्टि आता॥३२॥

छू देती है मृदु-पवन जो पास आ गात मेरा।
तो हो जाती परस सुधि है श्याम-प्यारे-करों की॥
ले पुष्पों की सुरभि वह जो कुंज में डोलती है।
तो गंधों से वलित मुख की वास है याद आती॥३३॥

ऊँचे-ऊँचे शिखर चित की उच्चता हैं दिखाते।
ला देता है परम दृढ़ता मेरु आगे दृगों के॥
नाना-क्रीड़ा-निलय-झरना चारु-छीटें उड़ाता।
उल्लासों को कुँवर-वर के चक्षु में है लसाता॥३४॥

कालिंदी एक प्रियतम के गात की श्यामता ही।
मेरे प्यासे दृग-युगल के सामने है न लाती॥
प्यारी लीला सकल अपने कूल की मंजुता से।
सद्भावों के सहित चित में सर्वदा है लसाती॥३५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



फूली संध्या परम-प्रिय की कांति सी है दिखाती।
मैं पाती हूँ रजनि-तन में श्याम का रंग छाया॥
ऊषा आती प्रति-दिवस है प्रीत से रंजिता हो।
पाया जाता वर-वदन सा ओप आदित्य में है॥३६॥

मैं पाती हूँ अलक-सुषमा भृंग की मालिका में।
है आँखों की सु-छवि मिलती खंजनों औ मृगों में॥
दोनों बाँहें कलभ कर को देख हैं याद आती।
पाई शोभा रुचिर शुक के ठोर में नासिका की॥३७॥

है दाँतों की झलक मुझको दीखती दाड़िमों में।
बिंबाओं में वर अधर सी राजती लालिमा है॥
मैं केलों में जघन-युग की मंजुता देखती हूँ।
गुल्फों की सी ललित सुषमा है गुलों में दिखाती॥३८॥

नेत्रोन्मादी बहु-मुदमयी-नीलिमा गात की सी।
न्यारे नीले गगन-तल के अंक में राजती है॥
भू में शोभा सरस जल में, वह्नि में दिव्य-आभा।
मेरे प्यारे-कुँवर वर सी प्रायशः है दिखाती॥३९॥

सायं-प्रातः सरस स्वर से कूजते हैं पखेरू।
प्यारी-प्यारी मधुर ध्वनियाँ मत्त हो, हैं सुनाते॥
मैं पाती हूँ मधुर ध्वनि में कूजने में खगों के।
मीठी-तानें परम-प्रिय की मोहिनी-वंशिका की॥४०॥

मेरी बातें श्रवण कर के आप उद्विग्न होंगे।
जानेंगे मैं विवश बन के हूँ महा-मोह-मग्ना॥
सच्ची यों है न निज-सुख के हेतु मैं मोहिता हूँ।
संरक्षा में प्रणय-पथ के भावतः हूँ सयत्ना॥४१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



हो जाती है विधि-सृजन से इक्षु में माधुरी जो।
आ जाता है सरस रँग जो पुष्प की पंखड़ी में॥
क्यों होगा सो रहित रहते इक्षुता-पुष्पता के।
ऐसे ही क्यों प्रसृत उर से जीवनाधार होगा॥४२॥

क्यों मोहेंगे न दृग लख के मूर्तियाँ रूपवाली।
कानों को भी मधुर-स्वर से मुग्धता क्यों न होगी॥
क्यों डूबेंगे न उर रंग में प्रीति-आरंजितों के।
धाता-द्वारा सृजित तन में तो इसी हेतु वे हैं॥४३॥

छाया-ग्राही मुकुर यदि हो, वारि हो चित्र क्या है।
जो वे छाया ग्रहण न करें चित्रता तो यही है॥
वैसे ही नेत्र, श्रुति, उर में जो न रूपादि व्यापें।
तो विज्ञानी, विबुध उनको स्वस्थ कैसे कहेंगे॥४४॥

पाई जाती श्रवण करने आदि में भिन्नता है।
देखा जाना प्रभृति भव में भूरि-भेदों भरा है॥
कोई होता कलुष-युत है कामना-लिप्त हो के।
त्योंही कोई परम-शुचितावान और संयमी है॥४५॥

पक्षी होता सु-पुलकित है देख सत्पुष्प फूला।
भौंरा शोभा निरख रस ले मत्त हो गूँजता है॥
अर्थी-माली मुदित बन भी है उसे तोड़ लेता।
तीनों का ही कल-कुसुम का देखना यों त्रिधा है॥४६॥

लोकोल्लासी छवि लख किसी रूप उद्भासिता की।
कोई होता मदन-बश है मोद में मग्न कोई॥
कोई गाता परम-प्रभु की कीर्ति है मुग्ध सा हो।
यों तीनों की प्रचुर-प्रखरा दृष्टि है भिन्न होती॥४७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



शोभा-वाले विटप विलसे पक्षियों के स्वरों से।
विज्ञानी है परम-प्रभु के प्रेम का पाठ पाता॥
व्याधा की हैं हनन-रुचियाँ और भी तीव्र होती।
यों दोनों के श्रवण करने में बड़ी भिन्नता है॥४॥

यों ही है भेदयुत चखना, सूँघना और छूना।
पात्रों में है प्रकट इनकी भिन्नता नित्य होती॥
ऐसी ही हैं हृदय-तल के भाव में भिन्नताएँ।
भावों ही से अवनि-तल है स्वर्ग के तुल्य होता॥४९॥

प्यारे आवें सु-वयन कहें प्यार से गोद लेवें।
ठंढे होवें नयन, दुख हों दूर मैं मोद पाऊँ॥
ये भी हैं भाव मम उर के और ये भाव हैं।
प्यारे जीवें जग-हित करें गेह चाहे न आवें॥५०॥

जो होता है हृदय-तल का भाव लोकोपतापी।
छिद्रान्वेषी, मलिन, वह है तापसी-वृत्ति-वाला॥
नाना भोगाकलित, विविधा-वासना-मध्य डूबा।
जो है स्वार्थाभिमुख वह है राजसी-वृत्तिशाली॥५१॥

निष्कामी है भव-सुखद है और है विश्व-प्रेमी।
जो है भोगोपरत वह है सात्त्विकी-वृत्ति-शोभी॥
ऐसी ही है श्रवण करने आदि की भी व्यवस्था।
आत्मोत्सर्गी, हृदय-तल की सात्त्विकी-वृत्ति ही है॥५२॥

जिह्वा, नासा, श्रवण अथवा नेत्र होते शरीरी।
क्यों त्यागेंगे प्रकृति अपने कार्य को क्यों तजेंगे॥
क्यों होवेंगी शमित उर की लालसाएँ, अतः मैं।
रंगे देती प्रति-दिन उन्हें सात्त्विकी-वृत्ति में हूँ॥५३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



कंजों का या उदित-विधु का देख सौंदर्य आँखों।
या कानों से श्रवण करके गान मीठा खगों का॥
मैं होती थी व्यथित, अब हूँ शांति सानंद पाती।
प्यारे के पाँव, मुख, मुरली-नाद जैसा उन्हें पा॥५४॥

यों ही जो है अवनि नभ में दिव्य, प्यारा, उन्हें मैं।
जो छूती हूँ श्रवण करती देखती सूँघती हूँ॥
तो होती हूँ मुदित उनमें भावतः श्याम की पा।
न्यारी-शोभा, सुगुण-गरिमा अंग संभूत साम्य॥५५॥

हो जाने से हृदय-तल का भाव ऐसा निराला।
मैंने न्यारे परम गरिमावान दो लाभ पाए॥
मेरे जी में हृदय विजयी विश्व का प्रेम जागा।
मैंने देखा परम प्रभु को स्वीय-प्राणेश ही में॥५६॥

पाई जाती विविध जितनी वस्तुएँ हैं सबों में।
जो प्यारे को अमित रंग औ रूप में देखती हूँ॥
तो मैं कैसे न उन सबको प्यार जी से करूँगी।
यों है मेरे हृदय-तल में विश्व का प्रेम जागा॥५७॥

जो आता है न जन-मन में जो परे बुद्धि के है।
जो भावों का विषय न बना नित्य अव्यक्त जो है॥
है ज्ञाता की न गति जिसमें इंद्रियातीत जो है।
सो क्या है, मैं अबुध अबला जान पाऊँ उसे क्यों॥५८॥

शास्त्रों में है कथित प्रभु के शीश औ लोचनों की।
संख्याएँ हैं अमित पग औ हस्त भी हैं अनेकों॥
सो हो के भी रहित मुख से नेत्र नासादिकों से।
छूता, खाता, श्रवण करता, देखता, सूँघता है॥५९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



ज्ञाताओं ने विशद इसका मर्म यों है बताया।
सारे प्राणी अखिल जग के मूर्तियाँ हैं उसी की॥
होतीं आँखें प्रभृति उनकी भूरि-संख्यावती हैं।
सो विश्वात्मा अमित-नयनों आदि-वाला अतः है॥६०॥

निष्प्राणों की विफल बनतीं सर्व-गात्रेंद्रियाँ हैं।
है अन्या-शक्ति कृति करती वस्तुतः ईंद्रियों की॥
सो है नासा न दृग रसना आदि ईशांश ही है।
हो के नासादि रहित अतः सूँघता आदि सो है॥६१॥

ताराओं में तिमिर-हर में वह्नि-विद्युल्लता में।
नाना रत्नों, विविध मणियों में विभा है उसी की॥
पृथ्वी, पानी, पवन, नभ में, पादपों में, खगों में।
मैं पाती हूँ प्रथित-प्रभुता विश्व में व्याप्त की ही॥६२॥

प्यारी-सत्ता जगत-गत की नित्य लीलामयी है।
स्नेहोपेता परम-मधुरा पूतता में पगी है॥
ऊँची-न्यारी-सरल-सरसा ज्ञान-गर्भा मनोज्ञा।
पूज्या मान्या हृदय-तल की रंजिनी उज्ज्वला है॥६३॥

मैंने की हैं कथन जितनी शास्त्र-विज्ञात बातें।
वे बातें हैं प्रकट करती ब्रह्म है विश्व-रूपी॥
व्यापी है विश्व प्रियतम में विश्व में प्राणप्यारा।
यों ही मैंने जगत-पति को श्याम में है विलोका॥६४॥

शास्त्रों में है लिखित प्रभु की भक्ति निष्काम जो है।
सो दिव्या है मनुज-तन की सर्व संसिद्धियों से॥
मैं होती हूँ सुखित यह जो तत्वतः देखती हूँ।
प्यारे की औ परम-प्रभु की भक्तियाँ हैं अभिन्ना॥६५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



## चौपदे

( १ )

जो किसी के भी नहीं बाँधे बँधे
प्रेम-बंधन से गए वे भी कसे।
तीन लोकों में नहीं जो बस सके
प्यार वाली आँख में वे ही बसे॥

( २ )

जान जब तक सका नहीं तब तक
था बना जीव बैल तेली का।
जब सका जान तब जगत सारा
हो गया आँवला हथेली का॥

( ३ )

कौन है जानकार तुम जैसा
है हमारा अजान का बाना।
तुम हमें जानते जनाते हो
नाथ हमने तुम्हें नहीं जाना॥

( ४ )

पाठ जिसने कर दिखाने का पढ़ा
संकटों में जो सका जीवट दिखा।
काम करके ही जगत से जो टला
वह सका है टाल माथे का लिखा॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



( ५ )

धाक जिनकी मानती दुनिया रही
साधकर जो काम सब फूले फले।
वे भला कब छोड़ अपने पंथ को
मान माथे की लकीरों को चले॥

( ६ )

रंग में जो प्रेम के डूबे नहीं
जो न पर-हित की तरंगों में बहे।
किसलिए हरिनाम तो सह साँसतें
कंठ भर जल में खड़े जपते रहे॥

( ७ )

है कहीं बाल औ कहीं आँसू
और मुँह में कहीं हँसी का थल।
है कहीं मेघ औ कहीं बिजली
और कहीं पर बरस रहा है जल॥

( ८ )

हैं उसी के भाव के फूले कमल
जो सदा सिर पर सुजन सुर के चढ़े।
हैं उपज लहरें उसी में सोहती
सोत रस के मनसरोवर से कढ़े॥

( ९ )

आम बौरे बही बयार बसी
सज लताएँ हरी भरी डोलीं।
बोलबाला बसंत का होते
खिल उठी बेलि, कोयलें बोलीं॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



( १० )

आज काँटे बखेर कर जी में
फूल भी हो गया कटीला है।
चिटकती देखकर गुलाब-कली
चोट खा चित हुआ चुटीला है॥

( ११ )

वे-कलेजे के बनें तब क्यों न हम
बाल बिखरे देखकर जो जी टँगे।
या किसी की लट लटकती देखकर
लोटने जो साँप छाती पर लगे॥

( १२ )

भर सके हो नहीं भरे पर भी
कब नहीं हर तरह भरे जाते।
पट सके हो न पाटने पर भी
पेट तुम से निपट नहीं पाते॥

( १३ )

फूल से हम जिसे न मार सके
है वही आज भोंकता भाला।
आज है खा रहा कलेजा वह
है कलेजा खिला जिसे पाला॥

( १४ )

चाँद ऐसा खिल अगर सकता नहीं
क्यों न तो वह फूल जैसा ही खिले।
क्या छुटाई में भलाई है नहीं
दिल करे छोटा न छोटा दिल मिले॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



( १५ )

सूखती चाह-बेलि हरिआई
दूध की मक्खियाँ बनीं माखें।
रस बहा चाँदनी निकल आई
खिल गए कौल हँस पड़ीं आँखें॥

( १६ )

लालसा है रस बरसती ही रहे,
पर तुम्हारी आँख रिस से लाल है।
यह चमेली है खिलाना आग में
यह हथेली पर जमाना बाल है॥

( १७ )

थिर नहीं होतीं थिरकती हैं बहुत
हैं थिरकने में गतों को जाँचती।
काठ का पुतला ललकतों को बना
आँख तेरी पुतलियाँ हैं नाचतीं॥



Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



## कैकेयी का अनुताप

सबने रानी की ओर अचानक देखा,
वैधव्य-तुषारावृता यथा विधु-लेखा।
बैठी थी अचल तथापि असंख्य तरंगा,
वह सिंही अब थी हहा! गोमुखी गंगा—

"हाँ जनकर भी मैंने न भरत को जाना,
सब सुन लें, तुमने स्वयं अभी यह माना।
यह सच है तो फिर लौट चलो घर भैया,
अपराधिन मैं हूँ तात, तुम्हारी मैया।

दुर्बलता का ही चिह्न विशेष शपथ है,
पर अबलाजन के लिए कौन-सा पथ है?
यदि मैं उकसाई गई भरत से होऊँ,
तो पति समान ही स्वयं पुत्र भी खोऊँ।

ठहरो, मत रोको मुझे, कहूँ सो सुन लो,
पाओ यदि उसमें सार उसे सब चुन लो।
करके पहाड़-सा पाप मौन रह जाऊँ?
राई भर भी अनुताप न करने पाऊँ?"

थी सनक्षत्र शशि-निशा ओस टपकाती,
रोती थी नीरव सभा हृदय थपकाती।
उल्का-सी रानी दिशा दीप्त करती थी,
सबमें भय-विस्मय और खेद भरती थी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



"क्या कर सकती थी, मरी मन्थरा दासी,
मेरा ही मन रह सका न निज विश्वासी।
जल पंजर-गत अब अरे अधीर, अभागे,
वे ज्वलित भाव थे स्वयं तुझी में जागे।

पर था केवल क्या ज्वलित भाव ही मन में?
क्या शेष बचा था कुछ न और इस जन में?
कुछ मूल्य नहीं वात्सल्य-मात्र, क्या तेरा?
पर आज अन्य-सा हुआ वत्स भी मेरा।

थूके, मुझ पर त्रैलोक्य भले ही थूके,
जो कोई जो कह सके, कहे, क्यों चूके?
छीने न मातृपद किंतु भरत का मुझसे,
रे राम, दुहाई करूँ और क्या तुझसे?

कहते आते थे यही अभी नरदेही,
'माता न कुमाता, पुत्र कुपुत्र भले ही।'
अब कहें सभी यह हाय! विरुद्ध विधाता—
'हैं पुत्र पुत्र ही, रहे कुमाता माता।'

बस मैंने इसका बाह्य-मात्र ही देखा,
दृढ़ हृदय न देखा, मृदुल गात्र ही देखा,
परमार्थ न देखा, पूर्ण स्वार्थ ही साधा,
इस कारण ही तो हाय आज यह बाधा!

युग युग तक चलती रहे कठोर कहानी—
'रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।'
निज जन्म जन्म में सुने जीव यह मेरा—
"धिक्कार! उसे था महा स्वार्थ ने घेरा।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



"सौ बार धन्य वह एक लाल की माई,
जिस जननी ने है जना भरत-सा भाई।"
पागल-सो प्रभु के साथ सभा चिल्लाई—
"सौ बार धन्य वह एक लाल की माई।"

"हा! लाल! उसे भी आज गमाया मैंने,
विकराल कुयश ही यहाँ कमाया मैंने।
निज स्वर्ग उसी पर वार दिया था मैंने,
हर तुम तक से अधिकार लिया था मैंने।

पर वही आज यह दीन हुआ रोता है,
शंकित सबसे धृत हरिण-तुल्य होता है।
श्रा खंड आज अंगार-चंड है मेरा,
तो इससे बढ़कर कौन दंड है मेरा?

पटके मैंने पद-पाणि मोह के नद में,
जन क्या क्या करते नहीं स्वप्न में, मद में?
हा! दंड, कौन, क्या उसे डरूँगी अब भी?
मेरा विचार कुछ दयापूर्ण हो तब भी।

हा दया! हंत वह घृणा! अहह वह करुणा।
वैतरणी-सी हैं आज जाह्नवी-वरुणा।
सह सकती हूँ चिरनरक, सुनें सुविचारी,
पर मुझे स्वर्ग की दया दंड से भारी।

लेकर अपना यह कुलिश-कठोर कलेजा,
मैंने इसके ही लिए तुम्हें वन भेजा।
घर चलो इसी के लिए, न रूठो अब यों,
कुछ और कहूँ तो उसे सुनेंगे सब क्यों?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



मुझको यह प्यारा और इसे तुम प्यारे,
मेरे दुगुने प्रिय रहो न मुझसे न्यारे।
मैं इसे न जानूँ, किंतु जानते हो तुम,
अपने से पहले इसे मानते हो तुम।

तुम भ्राताओं का प्रेम परस्पर जैसा,
यदि वह सब पर यों प्रकट हुआ है वैसा।
तो पाप-दोष भी पुण्य-तोष है मेरा,
मैं रहूँ पंकिला, पद्म-कोष है मेरा।

आगत ज्ञानीजन उच्च भाल ले लेकर,
समझावें तुमको अतुल युक्तियाँ देकर।
मेरे तो एक अधीर हृदय है बेटा,
उसने फिर तुमको आज भुजा भर भेटा।

देवों की ही चिरकाल नहीं चलती है,
दैत्यों की भी दुर्वृत्ति यहाँ फलती है।"
हँस पड़े देव केकयी-कथन यह सुनकर,
रो दिये क्षुब्ध दुर्दैव दैत्य सिर धुनकर।

"छल किया भाग्य ने मुझे अयश देने का,
बल दिया उसी ने भूल मान लेने का।
अब कटे सभी ने पाश नाश के प्रेरे,
मैं वही केकयी, वही राम तुम मेरे।

होने पर बहुधा अर्ध रात्रि अंधेरी,
जीजी आकर करती पुकार थीं मेरी—
"लो कुहुकिनि, अपना कुहुक, राम यह जागा,
निज मँझली माँ का स्वप्न देख उठ भागा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



भ्रम हुआ भरत पर मुझे व्यर्थ संशय का,
प्रतिहिंसा ने ले लिया स्थान सब भय का।
तुम पर भी ऐसी भ्रांति भरत से पाती,
तो उसे मनाने भी न यहाँ मैं आती।

जीजी ही आतीं, किन्तु कौन मानेगा?
जो अंतर्यामी, वही इसे जानेगा।"
"हे अंब तुम्हारा राम जानता है सब,
इस कारण वह कुछ खेद मानता है कब?"

"क्या स्वाभिमान रखती न केकयी रानी?
बतला दे कोई मुझे उच्च कुल-मानी।
सहती कोई अपमान तुम्हारी अंबा?
पर हाय, आज वह हुई, निपट नालंबा?

मैं सहज भामिनी रही, सरल क्षत्राणी,
इस कारण सीखी नहीं दैन्य यह वाणी,
पर महा दीन हो गया आज मन मेरा,
भावज्ञ, सहेजो तुम्हीं भाव-धन मेरा।

समुचित ही मुझको विश्व-घृणा ने घेरा,
समझाता कौन सशांति मुझे भ्रम मेरा?
यों ही तुम वन को गए, देव सुरपुर को,
मैं बैठी ही रह गई लिये इस उर को।

बुझ गई पिता की चिता भरत-भुजधारी,
पितृभूमि आज भी तप्त तथापि तुम्हारी।
भय और शोक सब दूर उड़ाओ उसका,
चलकर सुचरित, फिर हृदय जुड़ाओ उसका।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



हो तुम्हीं भरत के राज्य, स्वराज्य सम्हालो,
मैं पाल सकी न स्वधर्म, उसे तुम पालो।
स्वामी को जीते जी न दे सकी सुख मैं,
मरकर तो उनको दिखा सकूँ यह सुख मैं।

मर मिटना भी है एक हमारी क्रीड़ा,
पर भारत-वाक्य है—सहूँ विश्व की व्रीड़ा।
जीवन-नाटक का अंत कठिन है मेरा,
प्रस्ताव मात्र में जहाँ अधैर्य अँधेरा।

अनुशासन ही था मुझे अभी तक आता,
करती है तुमसे विनय आज यह माता।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## ऊर्मिला-लक्ष्मण-मिलन

पाकर अहा ! उमंग ऊर्मिला-अंग भरे थे,
आली ने हँस कहा—"कहाँ ये रंग भरे थे ?
सुप्रभात है आज, स्वप्न की सच्ची माया।
किंतु कहाँ वे गीत, यहाँ जब श्रोता आया।

फड़क रहा है वाम नेत्र, उच्छ्वसित हृदय है,
अब भी क्या तन्वंगि, तुम्हें संशय या भय है ?
आओ, आओ, तनिक तुम्हें सिंगार सजाऊँ,
बरसों का मैं कसक मिटाऊँ, बलि-बलि जाऊँ।"

"हाय ! सखी, शृंगार ? मुझे अब भी सोहेंगे ?
क्या वस्त्रालंकार मात्र से वे मोहेंगे ?
मैंने जो वह 'दग्धवर्त्तिका' चित्र लिखा है।
तू क्या उसमें आज उठाने चली शिखा है ?

नहीं नहीं, प्राणेश मुझी से छले न जावें,
जैसी हूँ मैं, नाथ मुझे वैसा ही पावें।
शूर्पणखा मैं नहीं—हाय, तू तो रोती है।
अरी, हृदय की प्रीति हृदय पर ही होती है।

"किंतु देख यह वेश दुखी होंगे वे कितने ?"
"तो, ला भूषण-वसन, इष्ट हों तुझको जितने।
पर यौवन-उन्माद कहाँ से लाऊँगी मैं ?
वह खोया धन आज कहाँ सखि, पाऊँगी मैं ?"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



"अपराधी-सा आज वही तो आने को है,
बरसों का यह दैन्य सदा को आने को है।
कल रोती थी आज मान करने बैठी हो,
कौन राग यह, जिसे गान करने बैठी हो?

रवि को पाकर पुनः पद्मिनी खिल जाती है,
पर वह हिमकण बिना कहाँ शोभा पाती है।"
"तो क्या आँसू नहीं सखी, अब इन आँखों में?
फूटें, पानी न हो बड़ी भी जिन आँखों में?"

"प्रीति-स्वाति का पिया शुक्ति बन-बन कर पानी
राजहंसिनी, चुनो रीति-मुक्ता अब रानी।"
"विरह रुदन में गया, मिलन में भी मैं रोऊँ,
मुझे और कुछ नहीं चाहिए, पद-रज धोऊँ।

जब थी तब थी आलि, उर्मिला उनकी रानी,
वह बरसों की बात आज हो गई पुरानी।
अब तो केवल रहूँ सदा स्वामी की दासी,
मैं शासन की नहीं, आज सेवा की प्यासी।

युवती हो या आलि, ऊर्मिला बाला तन से,
नहीं जानती किंतु स्वयं, क्या है वह मन से।
देखूँ, कह प्रत्यक्ष आज अपने सपने को?
या सज-बजकर आप दिखाऊँ मैं अपने को?

सखि, यथेष्ट है यही धुली धोती ही मुझको,
लज्जा उनके हाथ, व्यर्थ चिंता है तुझको।
उछल रहा यह हृदय अंक में भर ले आली,
निरख तनिक तू आज ढीठ संध्या की लाली।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



मान करूँगी आज ? मान के दिन तो बीते,
फिर भी पूरे हुए सभी मेरे मनचीते।
टपक रही वह कुंज-शिला वाली शेफाली,
जा नीचे, दो चार फूल चुन, ले आ डाली।

वनवासी के लिए सुमन की भेंट भली वह।"
"किंतु उसे तो कभी पा चुका, प्रिये अली यह।"
देखा प्रिय को चौंक प्रिया ने, सखी किधर थी?
पैरों पड़ती हुई उर्मिला हाथों पर थी।

लेकर मानो विश्व-विरह उस अंतःपुर में,
समा रहे थे एक दूसरे के वे उर में।
रोक रही थी उधर मुखर मैंना को चेरी—
'यह हत हरिणी छोड़ गए क्यों नये अहेरी।'

"नाथ, नाथ", क्या तुम्हें सत्य ही मैंने पाया ?"
"प्रिये-प्रिये, हाँ आज-आज ही वह दिन आया।
मेघनाद की शक्ति सहन करके यह छाती,
अब भी क्या इन पाद-पल्लवों से न जुड़ाती ?

मिला उसी दिन किंतु तुम्हें मैं खोया-खोया,
जिस दिन आर्या बिना आर्य का मन था रोया।
पूर्ण रूप से सुनो, तुम्हें मैंने कब पाया,
जब आर्या का हनूमान ने विरह सुनाया।

अब तक मानो जिसे वेषभूषा में टाला,
अपने को ही आज मुझे तुमने दे डाला।
आँखों में ही रही अभी तक तुम थीं मानो,
अंतस्तल में आज अचल निज आसन जानो।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



परिधि-विहीन सुधांशु-सदृश संताप-विमोचन
धूलरहित, हिम-धौत सुमन-सा लोचन-रोचन
अपनी द्युति से आप उदित, आडंबर त्यागे,
धन्य अनावृत-प्रकृत-रूप यह मेरे आगे।

जो लक्ष्मण था एक तुम्हारा लोलुप कामी,
कह सकती हो आज उसे तुम अपना स्वामी।"
"स्वामी, स्वामी, जन्म-जन्म के स्वामी मेरे।
किंतु कहाँ वे अहोरात्र, वे साँझ–सवेरे।

खोई अपनी हाय! कहाँ वह खिल-खिल खेला?
प्रिय, जीवन की कहाँ आज वह चढ़तो बेला।"
काँप रही थी देह-लता उसकी रह रहकर,
टपक रहे थे अश्रु कपोलों पर बह बहकर।

"वह वर्षा की बाढ़, गई, उसको जाने दो,
शुचि-गभीरता प्रिये, शरद की यह आने दो।
धरा-धाम को राम-राज्य की जय गाने दो,
लाता है जो समय प्रेम पूर्वक लाने दो।

× × ×

अब जो प्रियतम को पाऊँ।
तो इच्छा है, उन चरणों की रज मैं आप रमाऊँ।
आप अवधि बन सकूँ कहीं तो क्या कुछ देर लगाऊँ
मैं अपने को आप मिटाकर, जाकर उनको लाऊँ।
ऊषा-सी आई थी जग में, संध्या-सी क्या जाऊँ?
श्रांत पवन-से वे आवें मैं सुरभि-समान समाऊँ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



मेरा रोदन मचल रहा है, कहता है, कुछ गाऊँ,
उधर गान कहता है, रोना आवे तो मैं आऊँ।
इधर अनल है और उधर जल, हाय किधर मैं जाऊँ।
प्रबल वाष्प, फट जाय न यह घट, कह तो हाहा खाऊँ?

× × ×

वेदने, तू भी भली बनी।
पाई मैंने आज तुझी में अपनी चाह घनी।
नई किरण छोड़ी है तूने, तू वह हीर-कनी,
सजग रहूँ मैं, साल हृदय में, जो प्रिय-विशिख-अनी।
ठंडी होगी देह न मेरी, रहे दृगंबु-सनी,
तू ही उसे उष्ण रक्खेगी मेरी तपन-मनी।
आ, अभाव की एक आत्मजे, और अदृष्टि-जनी।
तेरी ही छाती है सचमुच उपमोचितस्तनी।
अरि वियोग-समाधि, अनोखी, तू क्या ठीक ठनी,
अपने को, प्रिय को, जगती को देखूँ खिंची-तनी।
मन-सा मानिक मुझे मिला है मुझमें उपल-खनी,
तुझे तभी छोड़ूँ जब सजनी, पाऊँ प्राण-धनी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## यशोधरा-विरह

सखि, वसंत-से कहाँ गए वे,
मैं ऊष्मा-सी यहाँ रही।
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

तप मेरे मोहन का उद्धव धूल उड़ाता आया,
हाय! विभूति रमाने का भी मैंने योग न पाया।
सूखा कंठ, पसीना छूटा, मृगतृष्णा की माया,
झुलसी दृष्टि, अँधेरा दीखा, दूर गई वह छाया।

मेरा ताप और तप उनका,
जलती है हा! जठर मही।
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

जागी किसकी वाष्पराशि, जो सूने में सोती थी?
किसकी स्मृति के बीज उगे ये, सृष्टि जिन्हें बोती थी?
अरी वृष्टि, ऐसी ही उनकी दया-दृष्टि रोती थी,
विश्व-वेदना की ऐसी ही चमक उन्हें होती थी!

किसके भरे हृदय की धारा,
शतधा होकर आज बही?
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

CC-0. Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



उनकी शांति-कांति की ज्योत्स्ना जगती है पल-पल में,
शरदातप उनके विकास का सूचक है थल-थल में।
नाच उठी आशा प्रति दल पर किरणों की झल-झल में,
खुला सलिल का हृदय-कमल खिल हंसों के कल-कल में।

पर मेरे मध्याह्न ! बता क्यों
तेरी मूर्च्छा बनी वही ?
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

हेमपुंज, हेमंतकाल के इस आतप पर वारूँ,
प्रियस्पर्श की पुलकावलि मैं कैसे आज बिसारूँ ?
किंतु शिशिर, ये ठंडी साँसें हाय ! कहाँ तक धारूँ ?
तन गारूँ, मन मारूँ पर क्या मैं जीवन भी हारूँ ?

मेरी बाँह गही स्वामी ने,
मैंने उनकी छाँह गही,
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

पेड़ों ने पत्ते तक, उनका त्याग देखकर, त्यागे,
मेरा धुँधलापन कुहरा बन छाया सबके आगे।
उनके तप के अग्नि-कुंड-से घर-घर में हैं आगे,
मेरे कंप, हाय ! फिर भी तुम नहीं कहीं से भागे।

पानी जमा, परंतु न मेरे
खट्टे दिन का दूध-दही,
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



आशा से आकाश थमा है, श्वास-तंतु कब टूटे ?
दिन-मुख दमके, पल्लव चमके, भव से नव रस लूटे !
स्वामी के सद्भाव फैल कर फूल-फूल में फूटे,
उन्हें खोजने को ही मानो नूतन निर्झर छूटे !

उनके श्रम के फल सब भोगें
यशोधरा की विनय यही,
मैंने ही क्या सहा, सभी ने
मेरी बाधा-व्यथा सही।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## कंस

नियति कौन है ? एक नियंता
मैं ही अपना आप;
कर्म-भीरुओं का आकुंचन,
एक मात्र यह पाप।

धर्म एक, बस अग्नि-धर्म है,
जो आवे सो छार।
जल भी उड़े वाष्प बन बन कर
मल भी हो अंगार।

फूँक-फूँक कर पैर धरोगे
धरती पर तुम मूढ़ ?
तो फिर हटो, भाड़ में जाओ,
पाओ निज गति गूढ़।

मैं निश्चित बढ़ूँगा आगे,
पहने पादत्राण,
बचें कीट-कंटक, यदि उनको
प्रिय हैं अपने प्राण।

बनता नहीं ईंट-गारे से
वह साम्राज्य विशाल,
सुनो, चुने जाते हैं उसमें
रुधिराप्लुत कंकाल !

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



लिखो भले उसकी भीतों पर
दया-धर्म के चित्र,
सदा भुलाते रहें जनों को
जिनके चटुल चरित्र!

देख कहीं दो बूँद नेत्र-जल
तुम गल गए तुरंत,
जान लिया तो बस मिट्टी के
पुतले ही तुम संत!

ठौर अंक में पा सकती है
कोई मृदुता-मूर्ति,
किंतु हृदय में एक कठिनता
कर्मठता की पूर्ति।

जितने भी बंधन हैं, वे सब
अबलों के ही अर्थ,
बंधन बंधन ही है, तोड़ो,
यदि तुम सबल समर्थ।

ठहर ब्रह्मवादी, बकता है,
तू क्या अब्रह्मण्य?
तेरा ब्रह्म और तू दोनों
मेरे निकट नगण्य।

अटल एक ही न्याय जगत में,
वह है मत्स्यन्याय,
और एक ही असमर्थों का
है बस मरण उपाय।



Nepal Sanskrit University. Balmeeki Campus. Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



चुप रह, भावि बुद्ध के बच्चे !
ले तू अपनी बाट,
नागर बन कर भी क्या तूने
छोड़ी वन की चाट ?

मैं हूँ अहंब्रह्म-विश्वासी,
परब्रह्म है कौन ?
नर ही नारायण है, नर मैं,
सुनो इसे सब मौन।

भाग्यवान भगवान आप मैं,
सब हों मेरे भक्त,
नियम मानते हैं सशक्त ही,
रचते उन्हें सशक्त।

बढा-बढ़ा कर जन्म-जन्म में
मैं मन के संस्कार,
कर सकता क्या नहीं एक दिन
अग-जग पर अधिकार ?

क्या कर सकता नहीं आप मैं ?
मेरा कर्ता कौन ?
कोई सिद्धि, जिसे मैं चाहूँ,
उसका हर्त्ता कोन ?

साँप न जाय न लाठी टूटे,
बुरी नहीं यह रीति,
किंतु कापुरुषता है फिर भी,
कूटनीति क्या नीति ?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



टूट जाय टूटे जो लाठी,
बने रहें भुजदंड,
देखे मुझे लपेट नाग भी,
करूँ शुंड सौ खंड।

कलाकार था वह, जिसने की
नग्न रूप की सृष्टि,
किंतु नग्नता पर ही पहले
पड़ी सत्य की दृष्टि।

कुछ भी गोपन रहे न मुझको,
देखूँ सब प्रत्यक्ष,
झीना भी आवरण न रक्खे,
मेरा कोई लक्ष।

कहने भर के लिए एक मिस
ले रखना है ठीक,
बनें प्रकृति-पंथी नंगे भी
नाचो तुम निर्भीक।

सबका यहाँ समर्थन देखा,
सबका यहीं विरोध,
पियो मोद से, बना रहे बस
तुमको मेरा बोध।

बाधक और वृद्ध हो तुम तो
बद्ध रहो चुपचाप,
रहे भले ही फिर तुम मेरे
बहनोई या बाप।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



अरी देवकी, क्यों फिरती है
मेरे आगे दीन ?
राजा का आत्मीय कौन है,
जो है आज्ञाहीन।

श्रीफल फोड़ फोड़ कर कितने
बलि देते हैं लोग,
कुछ शिशुओं के सिर की बलि दे
साधा मैंने योग।

मैं शिशुपाल नहीं, सोचें वे
सिहरें जिनके गात्र,
जरासंध का जामाता मैं,
वह, सेनापति मात्र।

जैसे फल वैसे ही सिर भी
काट सके सो धार,
पुण्य-पाप क्या है, पौरुष ही
एक मात्र है सार।

रोया करें क्यों न किन्नर-कवि
कह कर मुझे नृशंस,
किंतु अपौरुषेय क्या उनका
यदि अमानुषिक कंस ?

तुम विश्वास करो तो कोई
क्यों न करेगा घात ?
दिखला दी वसुदेव-देवकी
दोनों ने यह बात।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



घुसी दया बन कर दुर्बलता,
हट दुर्बलते, दूर,
कंस बली है, कहे, भले ही
कोई उसको क्रूर।

फिर भी इसे मानता हूँ मैं,
भय का नाम परोक्ष,
वे शिशु फिर न जियें, पाकर भी
मेरे हाथों मोक्ष।

वे मेरे देखे, पर ओहो!
उनकी आकृति आज।
धूमकेतु में पलट गया क्या
वह नक्षत्र-समाज!

सर्प रूप धर क्लिन्न केंचुए
करते हैं फुंकार;
अथवा ये झंझा के झोंके
भरते हैं हुंकार।

दीप-शिखा बढ़ बुझी अचानक,
यह कैसा उत्पात?
क्या सचमुच मैं सिहर उठा हूँ,
यह लज्जा की बात।

आवे, आवे, जो चाहे सो
दिखलावे निज नाच,
बैठा हूँ मैं आप तिमिर में
बन कर प्रेत-पिशाच।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



जाओ बच्चो, तुम अनंत में
विचरो, यही विवेक,
देखूँ उनको, जो तुममें से
बच निकला है एक।

सुना, किशोर मात्र है केशव,
संमुख नहीं परंतु,
तभी जान पड़ता है मुझको
एक बड़ा-सा जंतु।

धिक्, फिर भी क्या चौंक गया मैं,
ढीला पड़ा किरीट!
अच्छा देखूँ क्यों न बुला कर
कैसा है वह कीट।

यह घन गरजा, हाँ, समुचित है
इसका तर्जन-नाद,
सचमुच मैं कर गया उपेक्षा,
मुझसे हुआ प्रमाद।

और इसीसे वासुदेव बच
बड़ा हो गया आज,
भीति न जगती हो, पर मुझको
लगती है यह लाज।

धर बैठा वह मोरमुकुट भी,
शासन-दंड सुवेणु,
नारद का कहना है—'मेरी
वीणा है बस रेणु।'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



कहते हैं, कुछ चमत्कार भी
दिखलाता है कृष्ण,
उसका चरणामृत पीने को,
मैं भी आज सतृष्ण।

धड़कन नहीं, चला है मेरे
भीतर एक प्रवाह,
यह क्या, यह क्या, चमकी चपला-
अंबर की असि आह।

भित्ति-चित्र भी चलते-से क्या
दीख गए क्षण काल?
द्वापर ही द्वापर है मेरे
चारों ओर अराल।

अरे, कौन है? बुला शीघ्र ही,
आवे वह अक्रूर,
कह दे, बाहर जाना होगा,
पर थोड़ी ही दूर।

भ्रम हो, भय हो, अप्रत्यय हो,
संशय, अनृत, यथार्थ,
जो भी हो, आ जावे खुलकर,
देखे फिर पुरुषार्थ,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



## श्रद्धा

"कौन तुम ? संसृति-जलनिधि तीर
तरंगों से फेंकी मणि एक,
कर रहे निर्जन का चुपचाप
प्रभा की धारा से अभिषेक ?

मधुर विश्रांत और एकांत
जगत का सुलझा हुआ रहस्य,
एक करुणामय सुंदर मौन
और चंचल मन का आलस्य !

सुना यह मनु ने मधु गुंजार
मधुकरी का-सा जब सानंद,
किये मुख नीचा कमल समान
प्रथम कवि का ज्यों सुंदर छंद।

एक झिटका-सा लगा सहर्ष,
निखरने लगे लुटे से, कौन—
गा रहा यह सुंदर संगीत ?
कुतूहल रह न सका फिर मौन।

और देखा वह सुंदर दृश्य
नयन का इंद्रजाल अभिराम,
कुसुम-वैभव में लता समान
चंद्रिका से लिपटा घन श्याम।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



हृदय की अनुकृति बाह्य उदार
एक लंबी काया, उन्मुक्त,
मधु पवन क्रीड़ित ज्यों शिशु साल
सुशोभित हो सौरभ संयुक्त।

मसृण गांधार देश के, नील
रोम वाले मेषों के चर्म,
ढँक रहे थे उसका वपु कांत
बन रहा था वह कोमल वर्म।

नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ-वन बीच गुलाबी रंग।

आह! वह मुख! पश्चिम के व्योम
बीच जब घिरते हों घन श्याम,
अरुण रवि-मंडल उनको भेद,
दिखाई देता हो छविधाम।

या कि, नव इंद्र नील लघु श्रृंग
फोड़ कर धधक रही हो कांत,
एक लघु ज्वालामुखी अचेत
माधवी रजनी में अश्रांत।

घिर रहे थे घुँघराले बाल
अंस अवलंबित मुख के पास,
नील घन-शावक से सुकुमार
सुधा भरने को विधु के पास।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



और उस मुख पर वह मुसक्यान
रक्त किसलय पर ले विश्राम,
अरुण की एक किरण अम्लान
अधिक अलसाई हो अभिराम।

नित्य यौवन छवि से ही दीप्त
विश्व की करुण कामना मूर्ति,
स्पर्श के आकर्षण से पूर्ण
प्रकट करती ज्यों जड़ में स्फूर्ति।

उषा की पहिली लेखा कांत,
माधुरी से भींगी भर मोद,
मद भरी जैसे उठे सलज्ज
भोर की तारक द्युति की गोद।

कुसुम कानन-अंचल में मंद
पवन प्रेरित सौरभ साकार,
रचित परमाणु पराग शरीर
खड़ा हो ले मधु का आधार।

और पड़ती हो उस पर शुभ्र
नवल मधु-राका मन की साध,
हँसी का मद विह्वल प्रतिबिंब
मधुरिमा खेला सदृश अबाध।

कहा मनु ने, नभ धरणी बीच
बना जीवन रहस्य निरुपाय,
एक उल्का-सा जलता भ्रांत,
शून्य में फिरता हूँ असहाय।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



शैल निर्झर न बना हतभाग्य
गल नहीं सका जो कि हिम-खंड,
दौड़कर मिला न जलनिधि अंक
आह वैसा ही हूँ पाषंड।

पहेली सा जीवन है व्यस्त
उसे सुलझाने का अभिमान
बताता है विस्मृति का मार्ग
चल रहा हूँ बन कर अनजान।

भूलता ही जाता दिन रात
सजल अभिलाषा कलित अतीत,
बढ़ा रहा तिमिर गर्भ में नित्य,
दीन जीवन का यह संगीत।

क्या कहूँ, क्या कहूँ मैं उद्भांत ?
विवर में नील गगन के आज
वायु की भटकी एक तरंग,
शून्यता का उजड़ा सा राज।

एक विस्मृति का स्तूप अचेत,
ज्योति का धुँधला सा प्रतिबिंब,
और जड़ता की जीवन राशि
सफलता का संकलित विलंब।

"कौन हो तुम वसंत के दूत
विरस पतझड़ में अति सुकुमार !
घन तिमिर में चपला की रेख,
तपन में शीतल मंद बयार।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



नखत की आशा किरण समान
हृदय के कोमल कवि की कांत-
कल्पना की लघु लहरी दिव्य
कर रही मानस हलचल शांत।"

लगा कहने आगंतुक व्यक्ति
मिटाता उत्कंठा सविशेष,
दे रहा हो कोकिल सानंद
सुमन को ज्यों मधुमय संदेश—

"भरा था मन में नव उत्साह
सीख लूँ ललित कला का ज्ञान
इधर रह गंधर्वों के देश
पिता की हूँ प्यारी संतान।

घूमने का मेरा अभ्यास,
बढ़ा था मुक्त व्योम-तल नित्य
कुतूहल खोज रहा था व्यस्त
हृदय सत्ता का सुंदर सत्य।

दृष्टि जब जाती हिम-गिरि ओर
प्रश्न करता मन अधिक अधीर,
धरा की यह सिकुड़न भयभीत
आह कैसी है? क्या है पीर?

मधुरिमा में अपनी ही मौन,
एक सोया संदेश महान,
सजग हो करता था संकेत,
चेतना मचल उठी अनजान।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



बढ़ा मन और चले ये पैर,
शैल मालाओं का शृंगार,
आँख की भूख मिटी यह देख
आह कितना सुंदर संभार!

एक दिन सहसा सिंधु अपार
लगा टकराने नग तल क्षुब्ध,
अकेला यह जीवन निरुपाय
आज तक घूम रहा विश्रब्ध।

यहाँ देखा कुछ बलि का अन्न,
भूत-हित-रत किसका यह दान!
इधर कोई है अभी सजीव
हुआ ऐसा मन में अनुमान।

तपस्वी! क्यों इतने हो क्लांत?
वेदना का यह कैसा वेग?
आह! तुम कितने अधिक हताश
बताओ यह कैसा उद्वेग!

हृदय में क्या है नहीं अधीर,
लालसा जीवन की निश्शेष?
कर रहा वंचित कहीं न त्याग
तुम्हें, मन में धर सुंदर वेश!

दुःख के डर से तुम अज्ञात
जटिलताओं का कर अनुमान,
काम से झिझक रहे हो आज,
भविष्यत् से बन कर अनजान।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



कर रही लीलामय आनंद,
महा चिति सजग हुई सी व्यक्त,
विश्व का उन्मीलन अभिराम
इसी में सब होते अनुरक्त।

काम मंगल से मंडित श्रेय,
सर्ग, इच्छा का है परिणाम,
तिरस्कृत कर उसको तुम भूल
बनाते हो असफल भवधाम।

"दुःख की पिछली रजनी बीच
विकसता सुख का नवल प्रभात,
एक परदा यह झीना नील
छिपाये है जिसमें सुख गात।

जिसे तुम समझे हो अभिशाप,
जगत की ज्वालाओं का मूल,
ईश का वह रहस्य वरदान
कभी मत इसको जाओ भूल।

विषमता की पीड़ा से व्यस्त
हो रहा स्पंदित विश्व महान,
यही दुख सुख विकास का सत्य
यही भूमा का मधुमय दान।

नित्य समरसता का अधिकार,
उमड़ता कारण जलधि समान,
व्यथा से नीली लहरों बीच
बिखरते सुखमणि गण द्युतिमान।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



लगे कहने मनु सहित विषाद:—
"मधुर मारुत से ये उच्छ्वास,
अधिक उत्साह तरंग अबाध
उठाते मानस में सविलास।

किंतु जीवन कितना निरुपाय!
लिया है देख नहीं संदेह,
निराशा है जिसका परिणाम
सफलता का वह कल्पित गेह।"

कहा आगंतुक ने सस्नेह—
"अरे तुम इतने हुए अधीर!
हार बैठे जीवन का दाँव,
जीतते मर कर जिसको वीर।

तप नहीं केवल जीवन सत्य
करुण यह क्षणिक दीन अवसाद,
तरल आकांक्षा से है भरा
सो रहा आशा का आह्लाद।

प्रकृति के यौवन का शृंगार
करेंगे कभी न बासी फूल,
मिलेंगे वे जाकर अति शीघ्र
आह उत्सुक हैं उनकी धूल।

पुरातनता का यह निर्मोक
सहन करती न प्रकृति पल एक,
नित्य नूतनता का आनंद
किये है परिवर्तन में टेक।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



युगों की चट्टानों पर सृष्टि
डाल पद-चिह्न चली गंभीर,
देव, गंधर्व, असुर की पंक्ति
अनुसरण करती उसे अधीर।

"एक तुम, यह विस्तृत भू-खंड
प्रकृति वैभव से भरा अमंद,
कर्म का भोग, भोग का कर्म
यही जड़ का चेतन आनंद

अकेले तुम कैसे असहाय
यजन कर सकते? तुच्छ विचार!
तपस्वी! आकर्षण से हीन
कर सके नहीं आत्म विस्तार।

दब रहे हो अपने ही बोझ
खोजते भी न कहीं अवलंब,
तुम्हारा सहचर बन कर क्या न
उऋण होऊँ मैं बिना विलंब?

समर्पण लो सेवा का सार
सजल संसृति का यह पतवार,
आज से यह जीवन उत्सर्ग
इसी पद तल में विगत विकार।

दया, माया, ममता लो आज,
मधुरिमा ला, अगाध विश्वास,
हमारा हृदय रत्न निधि स्वच्छ
तुम्हारे लिये खुला है पास।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



बनो संसृति के मूल रहस्य
तुम्हीं से फैलेगी वह वेल,
विश्व भर सौरभ से भर जाय
सुमन के खेलो सुंदर खेल।

"और यह क्या तुम सुनते नहीं
विधाता का मंगल वरदान—
"शक्तिशाली हो, विजयी बनो'
विश्व में गूँज रहा जय गान।

"डरो मत अरे अमृत संतान
अग्रसर है मंगलमय वृद्धि,
पूर्ण आकर्षण जीवन केंद्र
खिंची आवेगी सकल समृद्धि।

देव असफलताओं का ध्वंस
प्रचुर उपकरण जुटा कर आज,
पड़ा है बन मानव संपत्ति
पूर्ण हो मन का चेतन राज।

चेतना का सुंदर इतिहास
अखिल मानव भावों का सत्य,
विश्व के हृदय-पटल पर दिव्य,
अक्षरों से अंकित हो नित्य।

विधाता की कल्याणी सृष्टि
सफल हो इस भूतल पर पूर्ण,
पटें सागर, बिखरें ग्रह-पुंज
और ज्वालामुखियाँ हों चूर्ण।



Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



उन्हें चिनगारी सदृश सदर्प
कुचलती रहे खड़ी सानंद,
आज से मानवता की कीर्ति
अनिल, भू, जल में रहे न बंद।

जलधि के फूटें कितने उत्स
द्वीप, कच्छप डूबें-उतरायँ,
किंतु वह खड़ी रहे दृढ़ मूर्ति
अभ्युदय का कर रही उपाय।

विश्व की दुर्बलता बल बने,
पराजय का बढ़ता व्यापार
हँसाता रहे उसे सविलास
शक्ति का क्रीड़ामय संचार।

शक्ति के विद्युत्कण, जो व्यस्त
विकल बिखरे हैं, हो निरुपाय,
समन्वय उसका करे समस्त
विजयिनी मानवता हो जाय।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## वे कुछ दिन कितने सुंदर थे ?

वे कुछ दिन कितने सुंदर थे ?
जब सावन-घन-सघन बरसते–
इन आँखों की छाया भर थे।

सुरधनु रंजित नव-जलधर से–
भरे, क्षितिज व्यापी अंबर से,
मिले चूमते जब सरिता के
हरित कूल युग मधुर अधर थे।

प्राण पपीहा के स्वर वाली–
बरस रही थी जब हरियाली–
रस जलकन-मालती-मुकुल से–
जो मदमाते गंध विधुर थे।

चित्र खींचती थी जब चपला,
नील मेघ-तट पर वह विरला,
मेरी जीवन-स्मृति के जिसमें–
खिल उठते वे रूप मधुर थे।

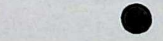

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## ले चल वहाँ भुलावा देकर

ले चल वहाँ भुलावा देकर
मेरे नाविक! धीरे-धीरे।

जिस निर्जन में सागर लहरी,
अंबर के कानों में गहरी–
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे।

जहाँ साँझ-सी जीवन छाया,
ढीले अपनी कोमल काया,
नील नयन से ढुलकाती हो,
ताराओं की पाँति घनी रे।

जिस गंभीर मधुर छाया में–
विश्व चित्र-पट चल माया में–
विभुता विभु-सी पड़े दिखाई,
दुख-सुख वाली सत्य बनी रे।

श्रम-विश्राम क्षितिज-वेला से–
जहाँ सृजन करते मेला से–
अमर जागरण उषा नयन से–
बिखराती हो ज्योति घनी रे!

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## हे सागर संगम अरुण नील !

हे सागर संगम अरुण नील।
अतलांत महा गंभीर जलधि
तज कर अपनी यह नियत अवधि,
लहरों के भीषण हासों में,
आकर खारे उच्छ्वासों में,
युग युग की मधुर कामना के—
बंधन को देता जहाँ ढील।
हे सागर संगम अरुण नील।

पिंगल किरणों-सी मधु-लेखा,
हिम-शैल बालिका को तूने कब देखा !

कलरव संगीत सुनाती,
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।
आगमन, अनंत मिलन बनकर–
बिखराता फेनिल तरल खील।
हे सागर संगम अरुण नील।

आकुल अकूल बनने आती,
अब तक तो है वह आती,
देवलोक की अमृत कथा की माया–
छोड़ हरित कानन की आलस छाया–
विश्राम माँगती अपना
जिसका देखा था सपना–
निस्सीम व्योम तल नील अंक में,
अरुण ज्योति की झील बनेगी कब सलील ?
हे सागर संगम अरुण नील।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## अशोक की चिंता

जलता यह जीवन-पतंग
जीवन कितना ? अति लघु क्षण,
ये शलभ पुंज से कण-कण,
तृष्णा वह अनलशिखा बन—
दिखलाती रक्तिम यौवन !
जलने की क्यों न उठे उमंग ?

है ऊँचा आज मगध-शिर—
पदतल में विजित पड़ा गिर,
दूरागत क्रंदन-ध्वनि फिर
क्यों गूँज रही है अस्थिर—
कर विजयी का अभिमान भंग ?

इन प्यासी तलवारों से,
इनकी पैनी धारों से,
निर्दयसा की मारों से,
उन हिंसक हुँकारों से,
नत-मस्तक आज हुआ कलिंग।

यह सुख कैसा शासन का ?
शासन रे मानव मन का।
गिरि-भार बना-सा तिनका,
यह घटाटोप दो दिन का—
फिर रवि-शशि-किरणों का प्रसंग !

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



यह महादंभ का दानव—
पीकर अनंग का आसव—
कर चुका महाभीषण रव,
सुख दे प्राणी को मानव
तज विजय पराजय का कुढंग।

संकेत कौन दिखलाती,
मुकुटों को सहज गिराती,
जयमाला सूखी जाती,
नश्वरता गीत सुनाती,
तव नहीं थिरकते हैं तुरंग।

वैभव की यह मधुशाला,
जग पागल होने वाला,
अब गिरा—उठा मतवाला,
प्याले में फिर भी हाला,
यह क्षणिक चल रहा राग-रंग।

काली काली अलकों में,
आलस, मद नत पलकों में,
मणि मुक्ता की झलकों में,
सुख की प्यासी ललकों में,
देखा क्षण-भंगुर है तरंग।

फिर निर्जन उत्सव-शाला,
नीरव नूपुर श्लथ माला,
सो जाती है मधुबाला,
सूखा लुढ़का है प्याला,
बजती वीणा न वहाँ मृदंग।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



इस नील विषाद गगन में—
सुख चपला-सा दुख-घन में
चिर विरह नवीन मिलन में,
इस मरु-मरीचिका-वन में—
उलझा है चंचल मन-कुरंग।

आँसू कन-कन ले छल-छल—
सरिता भर रही दृगंचल,
सब अपने में हैं चंचल
छूटे जाते सूने पल,
खाली न काल का है निषंग।

वेदना विकल यह चेतन,
जड़ का पीड़ा से नर्तन,
लय-सीमा में यह कंपन,
अभिनयमय है परिवर्तन,
चल रहा यही कब से कुढंग।

करुणा गाथा गाती है,
यह वायु वही जाती है,
ऊषा उदास आती है,
मुख पीला ले जाती है,
वन मधु पिंगल संध्या सुरंग।

अशोक किरन है आती,
रेशमी डोर खिंच जाती,
दृग पुतली कुछ नच पाती,
फिर तम पट में छिप जाती,
कलरव कर सो जाते विहंग।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



जब पल भर का है मिलना,
फिर चिर वियोग में झिलना,
एक ही प्रात है खिलना,
फिर सूख धूल में मिलना,
तब क्यों चटकीला सुमन रंग ?

संसृति के विक्षत पग रे।
यह चलती है डगमग रे।
अनुलेप सदृश तू लग रे।
मृदु दल बिखेर इस मग रे।
कर चुके मधुर मधुपान भृंग।

भुनती वसुधा, तपते नग,
दुखिया है सारा अग-जग,
कंटक मिलते हैं प्रति पग,
जलती सिकता का यह मग,

वह जा बन करुणा की तरंग,
चलता है यह जीवन पतंग।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## आँसू

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति-सी छाई
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आई।

मेरे क्रंदन में बजती
क्या वीणा ?—जो सुनते हो
धागों से इन आँसू के
निज करुणा-पट बुनते हो।

रो - रोकर सिसक-सिसक कर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी।

मैं बल खाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी
अंतर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी।

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरद माला
पाकर इस शून्य हृदय को
सब ने आ डेरा डाला।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



घिर जातीं प्रलय घटाएँ
कुटिया पर आकर मेरी
तम-चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी।

बिजली माला पहने फिर
मुसक्याता-सा आँगन में
हाँ, कौन बरस जाता था
रस-बूँद हमारे मन में?

तुम सत्य रहे चिर सुंदर
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन-संगी
कल्याण कलित इस मग के।

कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाए
स्वर्गंगा की धारा में
उज्ज्वल उपहार चढ़ाए।

गौरव था, नीचे आए
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिंचन,
देखे ज्यों स्वप्न सबेरे।

मधु राका मुसक्याती थी
पहले देखा जब तुमको
परिचित-से जाने कब के
तुम लगे उसी क्षण हमको!

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



परिचय राका जलनिधि का
जैसे होता हिमकर से
ऊपर से किरणें आतीं
मिलती हैं गले लहर से।

मैं अपलक इन नयनों से
निरखा करता उस छवि को
प्रतिभा डाली भर लाता
कर देता दान सुकवि को।

निर्झर-सा झिर-झिर करता
माधवी-कुंज छाया में
चेतना बही जाती थी
हो मंत्र-मुग्ध माया में।

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे
सूखी-सी फुलवारी में
किसलय नव कुसुम बिछाकर
आए तुम इस क्यारी में।

शशि-मुख पर घूँघट डाले
अंचल में दीप छिपाए
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आए।

घन में सुंदर बिजली-सी
बिजली में चपल चमक-सी
आँखों में काली पुतली
पुतली में श्याम झलक-सी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



प्रतिमा में सजीवता-सी
बस गई सुछवि आँखों में
थी एक लकीर हृदय में
जो अलग रही लाखों में।

माना कि रूप-सीमा है
सुंदर ! तव चिर यौवन में
पर समा गए थे, मेरे
मन के निस्सीम गगन में।

लावण्य-शैल राई-सा
जिस पर वारी बलिहारी
उस कमनीयता कला की
सुषमा थी प्यारी-प्यारी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

*सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'*

## भर देते हो

भर देते हो

बार-बार, प्रिय, करुणा की किरणों से
क्षुब्ध हृदय को पुलकित कर देते हो।
मेरे अंतर में आते हो, देव, निरंतर,
कर जाते हो व्यथा-भार लघु
बार बार कर-कंज बढ़ाकर,

अंधकार में मेरा रोदन
सिक्त धरा के अंचल को
करता है क्षण-क्षण-

कुसुम-कपोलों पर वे लोल शिशिर-कण,
तुम किरणों से अश्रु पोंछ लेते हो,
नव प्रभात जीवन में भर देते हो।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## मौन रही हार

मौन रही हार,
प्रिय - पथ चलती,
सब कहते शृङ्गार !

कण-कण कर कंकण, प्रिय
किण-किण रव किंकिणी,
रणन-रणन नूपुर, उर लाज,
लौट रंकिणी,

और मुखर पायल स्वर करें बार-बार,
प्रिय-पथ पर चलती, सब कहते शृंगार !

शब्द सुना हो, तो अब
लौट कहाँ जाऊँ ?
उन चरणों को छोड़ और
शरण कहाँ पाऊँ ? —

बजे सजे उर के इस सुर के सब तार—
प्रिय-पथ पर चलती, सब कहते शृङ्गार !

●

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## भावना रँग दी तुमने प्राण

भावना रंग दी तुमने प्राण,
छंद-बंदों में निज आह्वान।

दिशाओं के सहस्र-दश दल
खुल गये नये-नये कोमल,
मध्य तुम बैठी चिर-अचपल,
वह रहा प्रतिपल सौरभ-ज्ञान।

ओस-आँसुओं-धुली नव गात,
स्पष्ट नयनों में नूतन प्राप्त,
भर रहा वात चपल तव बात,
कर रहा पलक-पात कर-दान।

बैठ जीवन-उपवन में मंद-
मंद सिखलाती नव-नव छंद,
चतुर्दिक प्रभा, प्रभा, आनंद
हर रहा जड़-निशि-क्रुश अज्ञान।

●

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



बहने दो,
रोक टोक से कभी नहीं रुकती है,
यौवन-मद की बाढ़ नदी की
किसे देख झुकती है ?

गरज गरज वह क्या कहती है, कहने दो—
अपनी इच्छा से प्रबल वेग से बहने दो।

सुना, रोकने उसे कभी कुंजर आया था,
दशा हुई फिर क्या उसकी ?
फल क्या पाया था ?

तिनका-जैसा मारा मारा
फिरा तरंगों में बेचारा—
गर्व गँवाया हारा,

अगर हठ-वश आओगे,
दुर्दशा करवाओगे—बह जाओगे।

देखते नहीं ? वेग से हहराती है—
नग्न प्रलय का-सा तांडव हो रहा—
चाल कैसी मतवाली-लहराती है—
प्रकृति को देख, मींचती आँखें,
त्रस्त खड़ी है—थर्राती है।

आज हो गए ढीले सारे बंधन,
मुक्त हो गए प्राण,
रुका है सारा करुणा-क्रंदन।

बहती कैसी पागल उसकी धारा !
हाथ जोड़कर खड़ा देखता दीन
विश्व यह सारा।



Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



बड़े दंभ से खड़े हुए ये भू-धर
समझे थे जिसे बालिका
आज ढहाते शिला-खंड-चय देख
काँपते थर-थर—
शिला-खंड नर-मुंड-मालिनी कहते उसे कालिका।

छूटी लट इधर-उधर लटकी हैं,
श्याम वक्ष पर खेल रही हैं
स्वर्ण-किरण-रेखाएँ,
एक पर दृष्टि जरा अटकी है,
देखा एक कली चटकी है।

लहरों पर लहरों का चंचल-नाच,
याद नहीं थी करनी उसकी जाँच
अगर पूछता कोई तो वह कहती,
उसी तरह हँसती पागल-सी बहती—

"नव जीवन की प्रबल उमंग,
जा रही मैं मिलने के लिए, पारकर सीमा,
प्रियतम असीम के संग।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## कौन तुम शुभ्र-किरण-वसना ?

कौन तुम शुभ्र-किरण-वसना ?
सीखा केवल हँसना—केवल हँसना—
शुभ्र-किरण वसना !

मंद मलय भर अंग-गंध मृदु
बादल अलकावलि कुंचित-ऋजु,
तारक हार, चंद्र मुख, मधु ऋतु
सुकृत–पुंज-अशना ।

नहीं लाज, भय, अनृत, अनय, दुख
लहराता उर मधुर प्रणय-सुख,
अनायास ही ज्योतिर्मय-मुख,
स्नेह - पाश - कसना ।

चंचल कैसे रूप - गर्व - बल
तरल सदा बहतीं कल-कल-कल,
रूप-राशि में टलमल-टलमल,
कुंद-धवल-दशना ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## स्नेह निर्झर बह गया है

स्नेह निर्झर बह गया है।
रेत ज्यों तन रह गया है।

आम की यह डाल जो सूखी दिखी,
कह रही है - "अब यहाँ पिक या शिखी
नहीं आते, पंक्ति मैं वह हूँ लिखी
नहीं जिसका अर्थ—
जीवन दह गया है।

दिये हैं मैंने जगत को फूल-फल,
किया है अपनी प्रभा से चकित - चल,
पर अनश्वर था सकल पल्लवित पल-
ठाट जीवन का वही
जो ढह गया है।

अब नहीं आती पुलिन पर प्रियतमा,
श्याम तृण पर बैठने को निरुपमा।
बह रही है हृदय पर केवल अमा,
मैं अलक्षित हूँ, यही
कवि कह गया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

## संध्या सुंदरी

दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या-सुंदरी परी-सी
धीरे–धीरे–धीरे
तिमिरांचल में चंचलता का नहीं कहीं आभास,
मधुर—मधुर हैं दोनों उसके अधर,
किंतु जरा गंभीर,–नहीं है उनमें हास-विलास।
हँसता है तो केवल तारा एक
गुँथा हुआ उन घुँघराले काले-काले बालों से,
हृदय-राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक।
अलसता की-सी लता
किंतु कोमलता की वह कली
सखी नीरवता के कंधे पर डाले बाँह,
छाँह-सी अंबर-पथ से चली।
नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग-राग-आलाप,
नूपुरों में भी रुनझुन-रुनझुन नहीं,
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा "चुप, चुप, चुप"
है गूँज रहा सब कहीं—
व्योम मंडल में—जगतीतल में—
सोती शांत सरोवर पर उस अमल-कमलिनी-दल में—
सौंदर्य-गर्विता सरिता के अति विस्मृत वक्षःस्थल में—
धीर-वीर-गंभीर शिखर पर हिमगिरि-अटल-अचल में—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## स्नेह निर्झर बह गया है

स्नेह निर्झर बह गया है।
रेत ज्यों तन रह गया है।

आम की यह डाल जो सूखी दिखी,
कह रही है - "अब यहाँ पिक या शिखी
नहीं आते, पंक्ति मैं वह हूँ लिखी
नहीं जिसका अर्थ—
जीवन दह गया है।

दिये हैं मैंने जगत को फूल-फल,
किया है अपनी प्रभा से चकित - चल,
पर अनश्वर था सकल पल्लवित पल-
ठाट जीवन का वही
जो ढह गया है।

अब नहीं आती पुलिन पर प्रियतमा,
श्याम तृण पर बैठने को निरुपमा।
बह रही है हृदय पर केवल अमा,
मैं अलक्षित हूँ, यही
कवि कह गया है।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## संध्या सुंदरी

दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या-सुंदरी परी-सी
धीरे–धीरे–धीरे
तिमिरांचल में चंचलता का नहीं कहीं आभास,
मधुर—मधुर हैं दोनों उसके अधर,
किंतु जरा गंभीर,–नहीं है उनमें हास-विलास।
हँसता है तो केवल तारा एक
गुँथा हुआ उन घुँघराले काले-काले बालों से,
हृदय-राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक।
अलसता की-सी लता
किंतु कोमलता की वह कली
सखी नीरवता के कंधे पर डाले बाँह,
छाँह-सी अंबर-पथ से चली।
नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग-राग-आलाप,
नूपुरों में भी रुनझुन-रुनझुन नहीं,
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा "चुप, चुप, चुप"
है गूँज रहा सब कहीं—
व्योम मंडल में—जगतीतल में—
सोती शांत सरोवर पर उस अमल-कमलिनी-दल में—
सौंदर्य-गर्विता सरिता के अति विस्मृत वक्षःस्थल में—
धीर-वीर-गंभीर शिखर पर हिमगिरि-अटल-अचल में—

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



उत्ताल-तरंगाघात-प्रलय-घन-गर्जन-जलधि-प्रबल में—
क्षिति में—जल में—नभ में—अनिल-अनल में—
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा "चुप, चुप, चुप"
है गूँज रहा सब कहीं।
और क्या है ? कुछ नहीं।
मदिरा की वह नदी बहाती आती,
थके हुए जीवों को वह सस्नेह
प्याला एक पिलाती,
सुलाती उन्हें अंक पर अपने,
दिखलाती फिर विस्मृत के वह अगणित मीठे सपने,
अर्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती जब लीन,
कवि का बढ़ जाता अनुराग,
विरहाकुल कमनीय कंठ से
आप निकल पड़ता तब एक विहाग।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## बादल राग

[ १ ]

झूम झूम मृदु गरज-गरज घन घोर!
राग अमर! अंबर में भर निज रोर।

झर-झर-झर निर्झर-गिरि-सर में
घर, मरु, तरु-मर्मर, सागर में,
सरित-तडित गति-चकित पवन में,
मन में, विजन गहन-कानन में,
आनन-आनन में, रव घोर कठोर
राग अमर! अंबर में भर निज रोर।

अरे वर्ष के हर्ष!
बरस तू, बरस-बरस रस-धार।
पार ले चल तू मुझको,
बहा, दिखा मुझको भी निज
गर्जन-भैरव-संसार।

उथल-पुथल कर हृदय
मचा हलचल
चल रे चल,
मेरे पागल बादल।.....

धँसता दल-दल,
हँसता है नद खल्-खल्
बहता, कहता कुल-कुल कल-कल कल-कल।
देख-देख नाचता हृदय
बहने को महा विकल-बेकल,

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



इस मरोर से—इसी शोर से—
सघन घोर गुरु-गहन रोर से
मुझे गगन का दिखा सघन वह छोर।
राग अमर! अंबर में भर निज रोर।

[ २ ]

ऐ निर्बंध!
अंध-तम-अगम-अनर्गल—बादल!
ऐ स्वच्छंद!
मंद चंचल-समीर-रथ पर उच्छृंखल।
ऐ उद्दाम!
अपार कामनाओं के प्राण!
बाधा-रहित विराट्!
ऐ विप्लव के प्लावन!
सावन-घोर गगन के
ऐ सम्राट्!
ऐ अटूट पर छूट-छूट पड़ने वाले उन्माद!
विश्व-विभव को लूट-लूट लड़नेवाले अपवाद!
श्री बिखेर, मुख फेर कली के निष्ठुर पीड़न!
छिन्न-भिन्न कर पत्र-पुष्प-पादप-वन-उपवन,
वज्र-घोष से ऐ प्रचंड!
आतंक जमानेवाले,
कंपित जंगम, नीड़-विहंगम,
ऐ न व्यथा पानेवाले।
भय के मायामय आँगन पर
गरजो विप्लव के नव जलधर।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



[ ३ ]

निरंजन बने नयन-अंजन।
कभी चपल-गति, अस्थिर-मति,
जल-कलकल तरल प्रवाह,
वह उत्थान-पतन-हत अविरत
संसृति-गत उत्साह,
कभी दुख-दाह,
कभी जलनिधि-जल विपुल अथाह,
कभी क्रीड़ारत साथ प्रभंजन
बने नयन-अंजन।

कभी किरण-कर पकड़-पकड़ कर
चढ़ते हो तुम मुक्त गगन पर।
झलमल ज्योति अयुत-कर-किंकर,
सीस झुकाते तुम्हें तिमिरहर।
अहे कार्य से गत कारण पर!
निराकार, हैं तीनों मिले भुवन—
बने नयन-अंजन।

आज श्याम-घन श्याम, श्याम छबि,
मुक्त-कंठ है तुम्हें देख कवि,
अहो कुसुम-कोमल कठोर-पवि!
शत - सहस्र - नक्षत्र - चंद्र-रवि-संस्तुत
नयन-मनोरंजन!
बने नयन-अंजन!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



## प्रार्थना

जग के उर्वर-आँगन में
बरसो ज्योतिर्मय जीवन
बरसो लघुलघु तृण तरु तर
हे चिर-अव्यय, चिर नूतन!

बरसो कुसुमों में मधु बन,
प्राणों में अमर प्रणय-धन,
स्मिति-स्वप्न अधर-पलकों में,
उर अंगों में सुख-यौवन!

छू-छू जग के मृत रज-कण
कर दो तृण-तरु में चेतन,
मृण्मरण बाँध दो जग का,
दे प्राणों का आलिंगन!

बरसो सुख बन, सुषमा बन,
बरसो जग-जीवन के धन!
दिशि-दिशि में औ' पल-पल में
बरसो संसृति के सावन।

●

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## पर्वत प्रदेश में पावस

पावस ऋतु थी पर्वत प्रदेश;
पल पल परिवर्तित प्रकृति देश।

मेखलाकार पर्वत अपार
अपने सहस्र दृग सुमन फाड़,
अवलोक रहा है बार बार
नीचे जल में निज महाकार,

—जिसके चरणों में पला ताल
दर्पण-सा फैला है विशाल!

गिरि का गौरव गाकर झर्-झर्
मद में नस नस उत्तेजित कर
मोती की लड़ियों-से सुंदर
झरते हैं झाग भरे निर्झर।

गिरिवर के उर से उठ-उठ कर!
उच्चाकांक्षाओं से तरुवर
हैं झाँक रहे नीरव नभ पर,
अनिमेष; अटल, कुछ चिंता पर!

—उड़ गया, अचानक, लो भूधर
फड़का अपार पारद के पर!
रव शेष रह गए हैं निर्झर!
है टूट पड़ा भू पर अंबर!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



धँस गए धरा में सभय शाल !
उठ रहा धुँआ, जल गया ताल !
—यों जलद यान में विचर-विचर
था इंद्र खेलता इंद्रजाल !

( वह सरला उस गिरि को कहती थी बादल-घर ! )

इस तरह मेरे चितेरे हृदय की
बाह्य-प्रकृति बनी चमत्कृत चित्र थी;
सरल शैशवकी सुखद-सुधि-सी वही
बालिका मेरी मनोरम मित्र थी।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## शिशु

कौन तुम अतुल, अरूप, अनाम ?
अये अभिनव, अभिराम !
मृदुलता ही है बस आकार,
मधुरिमा-छवि, शृंगार;
न अंगों में है रंग उभार,
न मृदु-उर में उद्‌गार;
निरे साँसों के पिंजर द्वार !
कौन हो तुम अकलंक, अकाम ?

कामना-से मा की सुकुमार
स्नेह में चिर साकार;
मृदुल-कुड्मल-से जिसे न ज्ञात
सुरभि का निज संसार;
स्रोत-से नव, अवदात,
स्खलित अविदित-पथ पर अविचार;
कौन तुम गूढ़, गहन, अज्ञात ?
अहे निरुपम, नवजात !

वेणु-से जिसकी मधुमय-तान
दुरी हो अंतर में अनजान
विरल उडु-से सरसी में तात;
इतर हो जिसका वासस्थान;
लहर से लघु, नादान,
कंप अंबुधि की एक महान;
विमल हिमजल-से एक प्रभात
कहीं से उतरे तुम छबिमान।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



गीति-से जीवन में लयमान,
भाव जिसके अस्पष्ट, अजान,
सुरभि-से जिसे विहान
उड़ा लाया हो प्राण;

स्वप्न-से निद्रित सजग समान
सुप्ति में जिसे न अपना ज्ञान;
रश्मि-से शुचि रुचिमान
बीचि में पड़ी वितान;

स्वीय स्मिति-से ही हे अज्ञान,
दिव्यता का निज तुम्हें न ध्यान!

खेलती अधरों पर मुसकान
पूर्व सुधि-सी अम्लान,
सरल उर की सी मृदु आलाप,
अनवगत जिसका गान;

कौन सी अमर गिरा यह, प्राण!
कौन से राग, छंद आख्यान?
स्वप्न लोकों में किन चुपचाप
विचरते तुम इच्छा गतिवान!

न अपना ही, न जगत का ज्ञान,
न परिचित हैं निज नयन, न कान;
दीखता है जग कैसा तात।
नाम, गुण रूप अजान?

तुम्हीं-सा हूँ मैं भी अज्ञात,
वत्स! जग है अज्ञेय महान!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## आँसू से

विरह है अथवा यह वरदान !
कल्पना में है कसकती-वेदना,
अश्रु में जीता, सिसकता गान है ;
शून्य आहों में सुरीले छंद हैं ;
मधुर लय का क्या कहीं अवसान है!

वियोगी होगा पहिला कवि,
आह से उपजा होगा गान ;
उमड़ कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान !

हाय किसके उर में
उतारूँ अपने उर का भार !
किसे अब दूँ उपहार
गूँथ यह अश्रुकणों का हार !!

मेरा पावस ऋतु-सा जीवन ,
मानस-सा उमड़ा अपार मन ;
गहरे धुँधले, धुले, साँवले ,
मेघों-से मेरे भरे नयन !

कभी उर में अगणित मृदु-भाव
कूजते हैं विहगों-से हाय !
अरुण कलियों-से कोमल घाव
कभी खुल पड़ते हैं असहाय !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



इंद्रधनु-सा आशा का सेतु
अनिल में अटका कभी अछोर,
कभी कुहरे सी धूमिल, घोर,
दीखती भावी चारों ओर!
तड़ित सा सुमुखि! तुम्हारा ध्यान
प्रभा के पलक मार, उर चीर,
गूढ़ गर्जन कर जब गंभीर
मुझे करता है अधिक अधीर;
जुगनुओं-से उड़ मेरे प्राण
खोजते हैं तब तुम्हें निदान!
धधकती हैं जलदों से ज्वाल,
बन गया नीलम व्योम प्रवाल,
आज सोने का संध्याकाल
जल रहा जतुगृह सा विकराल;
पटक रवि को बलि सा पाताल
एक ही वामन-पग में—
लपकता है तमिस्र तत्काल,
—धुएँ का विश्व विशाल!
चिनगियों-से तारों को डाल
आग का सा अँगार शशि लाल
लहकता है,—फैला मणि-जाल,
जगत को डसता है तम व्याल!
पूर्व सुधि सहसा जब सुकुमारि!
सरल शुक सी सुखकर सुर में
तुम्हारी भोली बातें
कभी दुहराती हैं उर में

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



अगन-से मेरे पुलकित प्राण
सहस्रों सरस स्वरों में कूक,
तुम्हारा करते हैं आह्वान,
गिरा रहती है श्रुति सी मूक!

देखता हूँ जब उपवन
पियालों में फूलों में
प्रिये भर भर अपना यौवन
पिलाता है मधु कर को;

नवोढ़ा बाल-लहर
अचानक उपकूलों के
प्रसूनों के ढिग रुक कर
सरकती है सत्वर,

अकेली आकुलता सी प्राण!
कहीं तब करती मृदु आघात,
सिहर उठता कृश गात,
ठहर जाते हैं पग अज्ञात!

देखता हूँ, जब पतला
इंद्रधनुषी हलका
रेशमी घूँघट बादल का
खोलती है कुमुद-कला;

तुम्हारे ही मुख का तो ध्यान
मुझे करता तब अंतर्धान
न जाने तुमसे मेरे प्राण
चाहते क्या आदान!

× × × ×



epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



बादलों के छायामय मेल
घूमते हैं आँखों में, फैल!
अवनि औ' अंबर के वे खेल
शैल में जलद, जलद में शैल!

शिखर पर विचर मरुत-रखवाल
वेणु में भरता था जब स्वर,
मेमनों-से मेघों के बाल
कुदकते थे प्रमुदित गिरि पर।

द्विरद-दंतों-से उठ सुंदर,
सुखद कर-सीकर-से बढ़ कर
भूति-से शोभित बिखर बिखर,
फैल फिर कटि के-से परिकर,

बदल यों विविध वेश जलधर
बनाते थे गिरि को गजवर!

इंद्रधनु की सुन कर टंकार
उचक चपला के चंचल बाल,
दौड़ते थे गिरि के उस पार
देख उड़ते-विशिखों की धार,

मरुत जब उनको द्रुत चुमकार
रोक देता था मेघासार

अचल के जब वे विमल विचार
अवनि से उठ उठ कर ऊपर,
विपुल व्यापकता में अविकार
लीन हो जाते थे सत्वर,

विहंगम सा बैठा गिरि पर
सुहाता था विशाल अंबर!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



पपीहों की वह पीन पुकार,
निझरों का भारी झर् झर,
झींगुरों की झीनी झनकार,
घनों की गुरु गंभीर घहर,
बिंदुओं की छनती छनकार,
दादुरों के वे दुहरे स्वर,

हृदय हरते थे विविध प्रकार
शैल-पावस के प्रश्नोत्तर!

खैंच ऐंचीला भ्रू-सुरचाप—
शैल की सुधि यों बारंबार—
हिला हरियाली का सुदुकूल,
झुला झरनों का झलमल हार,
जलद-पट से दिखला मुख-चंद्र,
पलक पल पल चपला के मार;

भग्न उर पर भूधर सा हाय!
सुमुखि, धर देती है साकार!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## नौका विहार

शांत, स्निग्ध, ज्योत्स्ना उज्ज्वल !
अपलक अनंत, नीरव भूतल !

सैकत-शय्या पर दुग्ध-धवल, तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म-विरल,
लेटी हैं श्रांत, क्लांत, निश्चल !

तापस-बाला गंगा निर्मल, शशि-मुख से दीपित मृदुकरतल,
लहरे उर पर कोमल कुंतल !

गोरे अंगों पर सिहर-सिहर, लहराता तार-तरल सुंदर
चंचल अंचल-सा नीलांबर !

साड़ी की सिकुड़न-सी जिस पर, शशि की रेशमी विभा से भर,
सिमटी हैं वर्तुल, मृदुल लहर !
चाँदनी रात का प्रथम प्रहर,
हम चले नाव लेकर सत्वर !

सिकता की सस्मित सीपी पर मोती की ज्योत्स्ना रही विचर,
लो, पालें चढ़ी उठा लंगर !

मृदु मंद मंद, मंथर मंथर, लघु तरणि, हंसिनी-सी सुंदर,
तिर रही, खोल पालों के पर !

निश्चल जल के शुचि दर्पण पर बिंबित हो रजत पुलिन निर्भर
दुहरे ऊँचे लगते क्षण भर !

कालाकाँकर का राज-भवन सोया जल में निश्चिंत, प्रमन
पलकों पर वैभव-स्वप्न सघन !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



नौका से उठतीं जल-हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर-छोर !
विस्फारित नयनों से निश्चल कुछ खोज रहे चल तारक दल
ज्योतित कर नभ का अंतस्तल
जिनके लघु दीपों को चंचल, अंचल की ओट किये अविरल
फिरतीं लहरें लुक-छिप पल-पल !
सामने शुक्र की छबि झलमल, पैरती परी-सी जल में कल,
रुपहरे कचों में हो ओझल !
लहरों के घूँघट से झुक-झुक दशमी का शशि निज तिर्यक्-मुख
दिखलाता, मुग्धा-सा रुक-रुक !
अब पहुँचतो चपल बीच धार,
छिप गया चाँदनी का कगार !
दो बाहों-से दूरस्थ तीर धारा का कृश कोमल शरीर
आलिंगन करने को अधीर !
अति दूर, क्षितिज पर विटप-माल लगती भू-रेखा-सी अराल,
अपलक-नभ नील-नयन विशाल;
मा के उर पर शिशु-सा, समीप, सोया धारा में एक द्वीप,
ऊर्मिल प्रवाह को कर प्रतीप;
वह कौन विहग ? क्या विकल कोक, उड़ता हरने निज विरह शोक ?
छाया की कोकी को विलोक !
पतवार घुमा, अब प्रतनुभार,
नौका घूमी विपरीत धार !
डाँड़ों के चल करतल पसार, भर-भर मुक्ताफल फेन-स्फार,
बिखराती जल में तार-हार !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## नौका विहार

शांत, स्निग्ध, ज्योत्स्ना उज्ज्वल !
अपलक अनंत, नीरव भूतल !

सैकत-शय्या पर दुग्ध-धवल, तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म-विरल,
लेटी हैं श्रांत, क्लांत, निश्चल !

तापस-बाला गंगा निर्मल, शशि-मुख से दीपित मृदुकरतल,
लहरे उर पर कोमल कुंतल !

गोरे अंगों पर सिहर-सिहर, लहराता तार-तरल सुंदर
चंचल अंचल-सा नीलांबर !

साड़ी की सिकुड़न-सी जिस पर, शशि की रेशमी विभा से भर,
सिमटी हैं वर्तुल, मृदुल लहर !
चाँदनी रात का प्रथम प्रहर,
हम चले नाव लेकर सत्वर !

सिकता की सस्मित सीपी पर मोती की ज्योत्स्ना रही विचर,
लो, पालें चढ़ी उठा लंगर !

मृदु मंद मंद, मंथर मंथर, लघु तरणि, हंसिनी-सी सुंदर,
तिर रही, खोल पालों के पर !

निश्चल जल के शुचि दर्पण पर बिंबित हो रजत पुलिन निर्भर
दुहरे ऊँचे लगते क्षण भर !

कालाकाँकर का राज-भवन सोया जल में निश्चिंत, प्रमन
पलकों पर वैभव-स्वप्न सघन !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



नौका से उठतीं जल-हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर-छोर !
विस्फारित नयनों से निश्चल कुछ खोज रहे चल तारक दल
ज्योतित कर नभ का अंतस्तल
जिनके लघु दीपों को चंचल, अंचल की ओट किये अविरल
फिरतीं लहरें लुक-छिप पल-पल !
सामने शुक्र की छबि झलमल, पैरती परी-सी जल में कल,
रुपहरे कचों में हो ओझल !
लहरों के घूँघट से झुक-झुक दशमी का शशि निज तिर्यक्-मुख
दिखलाता, मुग्धा-सा रुक-रुक !
अब पहुँचतो चपल बीच धार,
छिप गया चाँदनी का कगार !
दो बाहों-से दूरस्थ तीर धारा का कृश कोमल शरीर
आलिंगन करने को अधीर !
अति दूर, क्षितिज पर विटप-माल लगती भू-रेखा-सी अराल,
अपलक-नभ नील-नयन विशाल;
मा के उर पर शिशु-सा, समीप, सोया धारा में एक द्वीप,
ऊर्मिल प्रवाह को कर प्रतीप;
वह कौन विहग ? क्या विकल कोक, उड़ता हरने निज विरह शोक ?
छाया की कोकी को विलोक !
पतवार घुमा, अब प्रतनुभार,
नौका घूमी विपरीत धार !
डाँड़ों के चल करतल पसार, भर-भर मुक्ताफल फेन-स्फार,
बिखराती जल में तार-हार !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



चाँदनी के साँपों सी रलमल नाचतीं रश्मियाँ जल में चल
रेखाओं सी खिंच तरल-सरल

लहरों की लतिकाओं में खिल, सौ-सौ शशि, सौ-सौ उडु झिलमिल
फैले फूले जल में फेनिल !

अब उथला सरिता का प्रवाह, लग्गी से ले-ले सहज थाह;
हम बढ़े घाट को सहोत्साह !
ज्यों-ज्यों लगती है नाव पार
उर में आलोकित शत विचार !

इस धारा-सा ही जग का क्रम, शाश्वत इस जीवन का उद्गम
शाश्वत है गति, शाश्वत संगम !

शाश्वत नभ का नीला विकास, शाश्वत शशि का यह रजत हास,
शाश्वत लघु लहरों का विलास !

हे जग-जीवन के कर्णधार ! चिर जन्म-मरण के आर-पार
शाश्वत जीवन-नौका विहार !

मैं भूल गया अस्तित्व-ज्ञान, जीवन का यह शाश्वत प्रमाण
करता मुझको अमरत्व दान !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## चाँदनी

नीले नभ के शतदल पर
वह बैठी शारद हासिनी,
मृदु करतल पर शशि-मुख धर,
नीरव, अनिमिष, एकाकिनी !

वह स्वप्न-जड़ित नत चितवन
छू लेती अग-जग का मन,
श्यामल, कोमल, चल चितवन
जो लहराती जग-जीवन !

वह फूली बेला की वन
जिसमें न नाल, दल, कुड्मल,
केवल विकास चिर निर्मल
जिसमें डूबे दश दिशि-दल !

वह सोई सरित-पुलिन पर
साँसों में स्तब्ध समीकरण
केवल लघु-लघु लहरों में
मिलता मृदु-मृदु उर स्पंदन !

अपनी छाया में छिपकर
वह खड़ी शिखर पर सुंदर
है नाच रही शत-शत छबि
सागर की लहर-लहर पर !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



दिन की आभा दुलहिन वन
आई निशि-निभृत शयन पर-
वह छवि की छुई-मुई-सी
मृदु मधुर लाज से मर-मर !

जग के अस्फुट स्वप्नों का
वह हार गूँथती प्रतिपल,
चिर सजल-सजल करुणा से
उसके ओसों का अंचल !

वह मृदु मुकुलों के मुख में
भरती मोती के चुंबन,
लहरों के चल करतल में
चाँदी के चंचल उडुगण !

वह लघु परिमल के घन-सी
जो लीन अनिल में अविकल
सुख के उमड़े सागर-सी
जिसमें निमग्न उर-तट स्थल !

वह स्वप्निल शयन-मुकुल-सी
हैं मुँदे दिवस के द्युति दल;
उर में सोया जग का अलि,
नीरव जीवन-गुंजन कल !

वह नभ के स्नेह श्रवण में
दिशि की गोपन-संभाषण,
नयनों के मौन मिलन में
प्राणों की मधुर समर्पण !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



वह एक बूँद संसृति की
नभ के विशाल करतल पर,
डूबे असीम सुषमा में
सब ओर छोर के अंतर!

झंकार विश्व जीवन की
हौले हौले होती लय
वह शेष भले ही अविदित,
वह शब्द-मुक्त शुचि आशय!

वह एक अनंत प्रतीक्षा
नीरव, अनिमेष विलोचन,
अस्पृश्य, अदृश्य विभा वह,
जीवन की साश्रु-नयन क्षण!

वह शशि किरणों से उतरी
चुपके मेरे आँगन पर,
उर की आभा में खोई,
अपनी ही छवि से सुंदर!

वह खड़ी दृगों के संमुख
सब रूप, रेख, रँग ओझल,
अनुभूति मात्र सी उर में
आभास शांत, शुचि, उज्ज्वल!

वह है, वह नहीं, अनिर्वच,
जग उसमें वह जग में लय
साकार चेतना सी वह,
जिसमें अचेत जीवाशय,

●

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## तितली

नीली, पीली औ' चटकीली,
पंखों की प्रिय पंखड़ियाँ खोल,
प्रिय तितली ! फूल-सी ही फूली
तुम किस सुख में हो रही डोल ?

चाँदी-सा फैला है प्रकाश,
चंचल अंचल-सा मलयानिल,
है दमक रही दोपहरी में
गिरि-घाटी सौ रंगों में खिल !

तुम मधु की कुसुमित अप्सरि-सी
उड़-उड़ फूलों को बरसाती,
शत इंद्रचाप रच-रच प्रतिपल
किस मधुर गीति-लय में जाती ?

तुमने यह कुसुम-विहग लिवास
क्या अपने सुख से स्वयं बुना ?
छाया प्रकाश से या जग के
रेशमा परों का रंग चुना ?

क्या बाहर से आया, रंगिणि !
उर का यह आतप, यह हुलास ?
या फूलों से ली अनिल-कुसुम !
तुमने मन के मधु की मिठास ?

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



चाँदी का चमकीला आतप,
हिल-परिमल चंचल मलयानिल,
है दमक रही गिरि की घाटी,
शत रत्न-छाय रंगों में खिल।

'चित्रिणि! इस सुख का स्रोत कहाँ
जो करता नित सौंदर्य-सृजन?'
'वह स्वर्ग छिपा उर के भीतर'—
क्या कहती यही, सुमन-चेतन?

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## सुमन के प्रति

भाव, वाणी या रूप ?
तुम क्या हो चिर मूक सुमन !
किसके प्रतिरूप ?
मौन सुमन !

सुंदरता से अनिमिष चितवन
छू कोमल मर्मस्थल
मूक सत्व के भेद सकल
कह देती, ( खुद दल पर दल )—

सहज समझ लेता मन !···
विजय रूप की सदा भाव पर,
भाव रूप पर निर्भर !
मैं अवाक् हूँ तुम्हें देखकर

मौन रूपधर !
रूप नहीं है नश्वर !—
सत्ता का वह पूर्ण, प्रकृत स्वर,
सुंदर है वह,···अमर !

●

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## सत्य रूप

मुझे रूप ही भाता !
प्राण ! रूप ही मेरे उर में
मधुर भाव बन जाता !
मुझे रूप ही भाता !

जीवन का चिर सत्य
नहीं दे सका मुझे परितोष,
मुझे ज्ञान से वस्तु सुहाती,
सूक्ष्म बीज से कोष !

सच है जीवन के वसंत में
रहता है पतझार,
गंध वर्णमय कलि-कुसुमों का
पर ऐश्वर्य अपार !

राशि-राशि सौंदर्य, प्रेम,
आनंद गुणों का द्वार,
मुझे लुभाता रूप रंग
रेखा का यह संसार !

मुझे रूप ही भाता !
प्राण ! रूप का सत्य !
रूप के भीतर नहीं समाता !
मुझे रूप ही भाता !

●

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## सोनजुही

सोनजुही की वेल नवेली,
एक वनस्पति वर्ष, हर्ष से खेली, फूली, फैली,

सोनजुही की वेल नवेली।
आँगन के बाड़े पर चढ़ कर
दारु खंभ को गलबाँही भर,
कुहनी टेक कंगूरे पर

वह मुसकाती अलवेली!
सोनजुही की वेल छबीली।

दुबली पतली देह लतर, लोनी लंबाई,
—प्रेम डोर सौ सहज सुहाई!
फूलों के गुच्छों से उभरे अंगों की गोलाई,

—निखरे रंगों की गोराई—
शोभा की सारी सुघराई
जाने कब भुजगी ने पाई!
सौरभ के पलने में झूली,
मौन मधुरिमा में निज भूली,
यह ममता की मधुर लता,
मन के आँगन में छाई!

सोनजुही की वेल लजीली,
पहिले अब मुसकाई!

एक टाँग पर उचक खड़ी हो
मुग्धा वय से अधिक बड़ी हो—

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



पैर उठा, कृश पिंडुली पर धर,
घुटना मोड़, चित्र बन सुंदर,
पल्लव देही से मृदु मांसल,
खिसका धूपछाँह का आँचल,—
पंख सीप के खोल पवन में
वन की हरी परी आँगन में
उठ अँगूठे के बल ऊपर
उड़ने को अब छूने अंबर!

सोनजुही की बेल हठीली
लटकी सधी अधर पर!

झालरदार गरारा पहने,
स्वर्णिम कलियों के सज गहने
बूटे कढ़ी चूनरी फहरा,
शोभा की लहरी सी लहरा,—
तारों की सी छाँह साँवली,
सीधे पग धरती न बावली—
कोमलता के भार से मरी,
अंग भंगिमा भरी, छरहरी!
उद्भिद् जग की सी निर्झरिणी
हरित नीर, बहती सी टहनी।

सोनजुही की बेल,
चौकड़ी भरती चंचल हिरनी।

आकांक्षा सी उर से लिपटी,
प्राणों के रज तम से चिपटी
भू यौवन की सी अँगड़ाई,
मधु स्वप्नों की सी परछाँई,—

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding



रीढ़ स्तंभ का ले अवलंबन
धरा चेतना करती रोहण—
आः, विकास पथ पर भू जीवन !
सोनजुही की बेल,
गंध बन उड़ी, भरा नभ का मन !

मूल स्थूल धतरी के भीतर,
खींच अचेतन का तम बाहर,
वह अपने अंतर का प्रिय धन
शांति ध्वजा सा शुभ्र मणि सुमन
कंपित मृदुल हथेली पर धर,
उठा क्षीण भुजवृंत उच्चतर,—
अर्पित करती, लो प्रकाश को
निज अधरों के अमृत हास को,
प्राणों के स्वर्णिम हुलास को !
सोनजुही की बेल
समर्पित करती अंतर्मुख विकास को,
उर सुवास को !

मानव मन कर रहा प्रतीक्षा,
सोनजुही से ले नव दीक्षा,
उसके उर के अंध राग से,
प्राणों की हरिताभ आग से
फूटे चेतन शुभ्र, शिखा,
जो सके दिखा
मानवता का पथ
जीवन का रथ

pal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



—बढ़े !
प्रेम हो जग का इति अथ
त्याग जन सारथि अभिमत !
सोनजुही दृष्टांत,—
मनुज संघर्षों से श्लथ
रीढ़ कर्दम में लथपथ !



epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



## गीतावली

[ १ ]

घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय !
जलधि-मानस से नव जन्म पा
सुभग तेरे ही दृग-व्योम में,
सजल श्यामल मंथर मूक सा
तरल अश्रु-विनिर्मित गात ले,
नित घिरूँ झर झर मिटूँ प्रिय !
घन बनूँ वर दो मुझे प्रिय !

[ २ ]

रूपसि तेरा घन-केश-पाश !
श्यामल-श्यामल कोमल-कोमल,
लहराता सुरभित केश-पाश !
नभगंगा की रजत धार में,
धो आई क्या इन्हें रात ?
कंपित हैं तेरे सजल अंग,
सिहरा-सा तन हे सद्यस्नात !
भीगी अलकों के छोरों से
चूँती बूँदें कर विविध लास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



सौरभ-भीना झीना गीला
लिपटा मृदु अंजन-सा दुकूल,
चल अंचल से झर झर झरते
पथ में जुगनू के स्वर्ण-फूल;
दीपक से देता बार बार
तेरा उज्ज्वल चितवन-विलास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

उच्छ्वसित वक्ष पर चंचल है।
वक-पाँतों का अरविंद-हार;
तेरी निश्वासें छू भू को
बन-बन जाती मलयज बयार,
केकी-रव की नूपुर-ध्वनि सुन
जगती जगती की मूक प्यास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

इन स्निग्ध लटों से छा दे तन,
पुलकित अंकों में भर विशाल,
झुक सस्मित शीतल चुंबन से
अंकित कर इसका मृदुल भाल,
दुलरा देना बहला देना
यह तेरा शिशु जग है उदास !
रूपसि तेरा घन-केश-पाश !

[ ३ ]

धीरे-धीरे उतर क्षितिज से
आ वसंत रजनी !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



तारकमय नव वेणी बंधन;
शीश फूल कर शशि का नूतन;
रश्मि-वलय सित घन-अवगुंठन;

मुक्ताहल अभिराम बिछा दे
चितवन से अपनी!
पुलकती आ वसंत-रजनी!

मर्मर को सुमधुर नूपुर-ध्वनि;
अलि-गुंजित पद्मों की किंकिणि;
भर पद-गति में अलस तरंगिणि;

तरल रजत की धार बहा दे
मृदु स्मित से सजनी!
विहँसती आ वसंत-रजनी!

पुलकित स्वप्नों की रोमावलि;
कर में हो स्मृतियों की अंजलि,
मलयानिल का चल दुकूल अलि!

घिर छाया-सी श्याम, विश्व को
आ अभिसार बनी!
सकुचती आ वसंत-रजनी!

सिहर-सिहर उठता सरिता-उर;
खुल-खुल पड़ते सुमन सुधा-भर;
मचल-मचल आते पल फिर-फिर;

सुन प्रिय की पद-चाप हो गई
पुलकित यह अवनी!
सिहरती आ वसंत-रजनी!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



[ ४ ]

टूट गया वह दर्पण निर्मम !
उसमें हँस दी मेरी छाया !
मुझमें रो दी ममता माया,
अश्रु-हास ने विश्व सजाया,
रहे खेलते आँखमिचौनी
प्रिय ! जिसके परदे में 'मैं' तुम' !
टूट गया वह दर्पण निर्मम !

अपने दो आकार बनाने,
दोनों का अभिसार दिखाने,
भूलों का संसार बसाने,
जो झिलमिल झिलमिल-सा तुमने
हँस हँस दे डाला था निरुपम !
टूट गया वह दर्पण निर्मम !

कैसा पतझर कैसा सावन,
कैसी मिलन विरह की उलझन,
कैसा पल घड़ियोंमय जीवन,
कैसे निशि-दिन कैसा सुख-दुख
आज विश्व में तुम हो या तम।
टूट गया वह दर्पण निर्मम !

किसमें देख सँवारूँ कुंतल,
अंग राग पुलकों का मल मल,
स्वप्नों से आँजूँ पलकें चल,
किस पर रीझूँ किस पर रूठूँ,
भर लूँ किस छवि से अंतरतम !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



टूट गया वह दर्पण निर्मम !
आज कहाँ मेरा अपनापन,
तेरे छिपने का अवगुंठन,
मेरा बंधन तेरा साधन,
तुम मुझमें अपना सुख देखो
मैं तुम में अपना दुख प्रियतम !
टूट गया वह दर्पण निर्मम !

[ ५ ]

फिर विकल हैं प्राण मेरे !
तोड़ दो यह क्षितिज मैं भी देख लूँ उस पार क्या है ?
जा रहे जिस पंथ से युग कल्प उसका छोर क्या है ?
क्यों मुझे प्राचीर बन कर
आज मेरे श्वास घेरे ?

सिंधु की नि:सीमता पर लघु लहर का लास कैसा !
दीप लघु शिर पर धरे आलोक का आकाश कैसा !
दे रही मेरी चिरंतनता
क्षणों के साथ फेरे !

बिंबग्राहकता कणों को शलभ को चिर साधना दी,
पुलक से नभ भर धरा को कल्पनामय वेदना दी,
मत कहो हे विश्व ! 'झूठे
हैं अतुल वरदान तेरे !

नभ डुबा पाया न अपनी बाढ़ में भी क्षुद्र तारे,
ढूँढ़ने करुणा मृदुल घन चीर कर तूफान हारे,
अंत के तम में बुझे क्यों
आदि के अरमान मेरे !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



[ ६ ]

चिर सजग आँखें उनींदी आज कैसा व्यस्त बाना !
जाग तुझको दूर जाना !

अचल हिमगिरि के हृदय में आज चाहे कंप हो ले,
या प्रलय के आसुओं में मौन अलसित व्योम रो ले,
आज पी आलोक को ढोले तिमिर की घोर छाया,
जाग या विद्युत्-शिखाओं में निठुर तूफान बोले !
पर तुझे है नाश-पथ पर चिह्न अपने छोड़ आना !

बाँध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बंधन सजीले ?
पंथ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रँगीले ?
विश्व का क्रंदन भुला देगी मधुप की मधुर गुनगुन,
क्या डुबा देंगे तुझे यह फूल के दल ओस-गीले ?
तू न अपनी छाँह को अपने लिए कारा बनाना !

वज्र का उर एक छोटे अश्रु-कण में धो गलाया,
दे किसे जीवन-सुधा दो घूँट मदिरा माँग लाया ?
सो गई आँधी मलय की वात का उपधान ले क्या ?
विश्व का अभिशाप क्या चिर नींद बनकर पास आया ?
अमरता-सुत चाहता क्यों मृत्यु को उर में बसाना ?

कह न ठंढी साँस में अब भूल वह जलती कहानी,
आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानी,
हार भी तेरी बनेगी मानिनी जय की पताका,
राख क्षणिक पतंग की है अमर दीपक की निशानी !
है तुझे अंगार-शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाना !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



[ ७ ]

सब आँखों के आसूँ उजले सबके सपनों में सत्य पला !

जिसने उसको ज्वाला सौंपी
उसने इसमें मकरंद भरा
आलोक लुटाता वह घुल-घुल
देता झर यह सौरभ बिखरा !

दोनों संगी पथ एक किंतु कब दीप खिला कब फूल जला ?

वह अचल धरा को भेंट रहा
शत-शत निझंर में हो चंचल,
चिर परिधि बना भू को घेरे
इसका नित उर्म्मिल करुणा-जल !

कब सागर उर पाषाण हुआ, कब गिरि ने निर्मम तन बदला ?

नभ-तारक-सा खंडित पुलकित
यह सुर-धारा को चूम रहा,
वह अंगारों का मधु-रस पी
केशर-किरणों-सा झूम रहा !

अनमोल बना रहने को कब टूटा कंचन हीरक पिघला !

नीलम मरकत के संपुट दो
जिनमें बनता जीवन-मोती,
इसमें ढलते सब रंग-रूप
उसको आभा स्पंदन होती !

जो नभ में विद्युत् मेघ बना वह रज में अंकुर हो निकला !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



संसृति के प्रति पग में मेरी
साँसों का नव अंकन चुन लो,
मेरे बनने-मिटने में नित
अपनी साधों के क्षण गिन लो !
जलते खिलते बढ़ते जग में घुलमिल एकाकी प्राण चला !
सपने-सपने में सत्य ढला !

[ ८ ]

प्राणों ने कहा कब दूर,
पग ने कब गिने थे शूल ?
मुझको ले चला जब भ्रांत
वह निश्वास ही का ज्वार,
मैंने हँस प्रलय से बाँध
तरणी छोड़ दी मँझधार !
तुमसे पर न पूछा लौट,
अब होगा मिलन किस कूल ?

शतधा उफन पारावार,
लेता जब दिशाएँ लील,
लाता खींच झंझावात,
तम के शैल कज्जल-नील,
तब संकेत अक्षरहीन
पढ़ने में हुई कब भूल

मेरे सार्थवाही स्वप्न
अंचल में व्यथा भरपूर,
आँखें मोतियों का देश
साँसें बिजलियों का चूर !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



तुमसे ज्वाल में हो एक
मैंने भेंट ली यह धूल

मेरे हर लहर में अंक,
हर कण में पुलक के याम,
पल जो भेजते हो रिक्त
मधुर भर बाँटती अविराम!
मेरी पर रही कब साध
जग होता तनिक अनुकूल?

भू की रागिनी में गूँज,
गर्जन में गगन को नाप,
क्षण में वार क्षण में पार
जाती जब चरण की चाप,
देती अश्रु का मैं अर्घ्य
धर चिनगारियों के फूल!

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

## पहला दौंगरा

गगन में मेघ घिर आए ।
तुम्हारी याद
स्मृति के पींजड़े में बाँध कर मैंने नहीं रखी;
तुम्हारे स्नेह को भरना
पुरानी कुप्पियों में स्वत्व की
मैंने नहीं चाहा ।
गगन में मेघ घिरते हैं ।
तुम्हारी याद घिरती है ।
उमड़ कर विवश बूँदें बरसती हैं—
तुम्हारी सुधि बरसती है ।
न जाने अंतरात्मा में मुझे यह कौन कहता है
तुम्हें भी यही प्रिय होता ।
क्योंकि तुमने भी निकट से दुःख जाना था ।
दुःख सब को माँजता है
और—
चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न जाने, किंतु—
जिनको माँजता है
उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखें ।
मगर जो हो
अभी तो मेघ घिर आए

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



पड़ा यह दौंगरा पहला
धरा ललकी, उठी, बिखरी हवा में
बास सोंधी
मुग्ध मिट्टी की।
भिगो दो, आह !
ओ रे मेघ, क्या तुम जानते हो
तुम्हारे साथ कितने हियों में कितनी असीसें
उमड़ आई हैं ?

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## उषःकाल की भव्य शांति

निबिडाऽन्धकार
को मूर्त रूप दे देनेवाली
एक अकिंचन, निष्प्रभ अनाहूत
अज्ञात द्युति-किरण—
आसन्न-पतन, बिन-जमी ओस की अंतिम
ईषत्करुण, स्निग्ध, कातर शीतलता
अस्पृष्ट किंतु अनुभूत—
दूर किसी मीनार-क्रोड़ मुल्ला का
एक-रूप पर अनेक भावोद्दीपक
गंभीऽर आऽह्वान—
'अस्सला तु खैरुम्पिनिम्नाऽ'—
निकट गली में
किसी निष्करुण जन से बिन-कारण पदाक्रांत
पिल्ले की करुण रिरियाहट—
पार गली के छप्परतल में
शिशु का तुनक-तुनककर रोना, मातृवक्ष को आतुर
ऊपर
व्याप्त ओर-छोरमुक्त नीलाकाश—
दो अनथक, अपलक-द्युति ग्रह
रात-रात में नभ का आधा व्यास पार कर
फिर भी नियति बद्ध अग्रसर।
उषःकाल

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



अनायास उठ गया चेतना से निद्रा का आंचल—
मिला न पर पार्थक्य, पड़ा मैं स्तब्ध, अचंचल
मैं ही हूँ वह पदाक्रांत रिरियाता कुत्ता—
मैं ही वह मीनार-शिखर का प्रार्थी मुल्ला—
मैं वह छप्पर-तल का अहंलीन शिशु-भिक्षुक—
और, हाँ, निश्चय,
मैं वह तारक-युग्म,
अपलक-द्युति, अनथक-गति, वद्ध-नियति
जो पार किये जा रही नील-मरु-प्रांगण नभ का।
मैं हूँ ये सब, ये सब मुझमें जीवित—
मेरे कारण अवगत-मेरे नेत्र में अस्तित्व-प्राप्त !
उषःकाल
उषःकाल की रहस्यमय
भव्य शांति !

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## यह दीप अकेला

यह दीप अकेला स्नेह-भरा
है गर्व-भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

यह जन है : गाता गीत जिन्हें फिर और कौन गाएगा ?
पनडुब्बा : ये मोती सच्चे फिर कौन कृती लाएगा ?
यह समिधा : ऐसी आग हठीला बिरला सुलगाएगा।
यह अद्वितीय : यह मेरा : यह मैं स्वयं विसर्जित :
यह दीप, अकेला, स्नेह भरा,
है गर्व-भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो !

यह मधु है : स्वयं काल की मौना का युग-संचय,
यह गोरस : जीवन-कामधेनु का अमृत-पूत पय,
यह अंकुर : फोड़ धरा को रवि को तकता निर्भय,
यह प्रकृत, स्वयंभू, ब्रह्म, अयुत :
इसको भी शक्ति को दे दो।
यह दीप, अकेला, स्नेह-भरा
है गर्व-भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

यह वह विश्वास नहीं जो अपनी लघुता में भी काँपा,
वह पीड़ा, जिस की गहराई को स्वयं उसी ने नापा,

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कुत्सा, अपमान, अवज्ञा के धुँधुआते कडुवे तम में
यह सदा-द्रवित, चिर-जागरूक, अनुरक्त-नेत्र,
उल्लंब-बाहु, यह चिर अखंड अपनाया।
जिज्ञासु, प्रबुद्ध, सदा श्रद्धामय
इसको भी भक्ति को दे दो।

यह दीप, अकेला, स्नेह-भरा
है गर्व-भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

## कतकी पूनो

छिटक रही है चाँदनी,
मदमाती, उन्मादिनी,
कलगी-मौर-सजाव ले,
कास हुए हैं बावले,
पकी ज्वार से निकल शशों की जोड़ी बनी फलाँगती—
सन्नाटे में बाँक नदी की जगी चमक कर झाँकती !
कुहरा झीना और महीन,
झर-झर पड़े अकासनीम,
उजली-लालिमा मालती,
गंध के डोरे डालती,
मन में दुबकी है हुलास ज्यों परछाईं हो चोर की—
तेरी बाट अगोरते ये आँखें हुईं चकोर की।



epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## नदी के द्वीप

[ १ ]

हम नदी के द्वीप हैं।
हम नहीं कहते कि हमको छोड़ कर स्रोतस्विनी बह जाय।
वह हमें आकार देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अंतरीप, उभार, सैकत कूल,
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं
माँ है वह। है, इसी से हम बने हैं।

[ २ ]

किंतु हम हैं द्वीप।
हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के।
किंतु हम बहते नहीं हैं। क्योंकि बहना रेत होना है।
हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।
पैर उखड़ेंगे। प्लवन होगा। ढहेंगे। सहेंगे। बह जाएँगे।
और फिर हम चूर्ण होकर भी कभी क्या धार बन सकते?
रेत बन कर हम सलिल को तनिक गँदला ही करेंगे।
अनुपयोगी ही बनाएँगे।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



[ ३ ]

द्वीप हैं हम।
यह नहीं है शाप। यह अपनी नियति है।
हम नदी के पुत्र हैं। बैठे नदी के क्रोड़ में।
वह बृहद् भूखंड से हमको मिलाती है।
और वह भूखंड
अपना पितर है।

[ ४ ]

नदी, तुम बहती चलो।
भूखंड से जो दाय हमको मिला है, मिलता रहा है,
माँजती, संस्कार देती चलो।
यदि ऐसा कभी हो
तुम्हारे आह्लाद से या दूसरों के किसी स्वैराचार से—
अतिचार से—
तुम बढ़ो, प्लावन तुम्हारा घरघराता उठे—
यह स्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्त्तिनाशा घोर
काल-प्रवाहिनी बन जाय
तो हमें स्वीकार है वह भी। उसी में रेत होकर
फिर छनेंगे हम। जमेंगे हम। कहीं फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खड़ा होगा नये व्यक्तित्व का आकार।
मातः, उसे फिर संस्कार तुम देना।

●

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## चेहरे असंख्य : आँखें असंख्य

चेहरे थे असंख्य,
आँखें थीं,
दर्द सभी में था—
जीवन का दंश सभी ने जाना था।
पर दो
केवल दो
मेरे मन में कौंध गईं।
क्यों ?
क्या उनमें अतिरिक्त दद था
जो अतीत में मेरा परिचित कभी रहा,
या मुझमें कोई छाया स्मृति जागी थी
जिसको मैंने उन आँखों में पढ़ा
कि जैसे सदा दूसरों में हम
जाने-अनजाने केवल
अपने ही को पढ़ते हैं ?
मैं नहीं जानता किसकी वे आँखें थीं,
नहीं समझता फिर उनको देखूँगा
( परिचय मन ही मन चाहा हो, उद्यम कोई नहीं किया ),
किंतु उसी की कौंध

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



मुझे फिर-फिर दिखलाती है
चेहरे असंख्य,
आँखें असंख्य,
जिन सब में दर्द भरा है
पर जिनको मैं पहले नहीं देख पाया था।
वही अपरिचित दो आँखें ही
चिर-माध्यम हैं
सब आँखों से, सब दर्दों से
मेरे चिर-परिचय का

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

## मैंने देखा, एक बूँद

मैंने देखा
एक बूँद सहसा
उछली सागर के झाग से
रँगी गई क्षण भर
ढलते सूरज की आग से।
मुझको दीख गया।
सूने विराट् के संमुख
हर आलोक-छुआ अपनापन
है उन्मोचन
नश्वरता के दाग से।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

# टिप्पणी

## अयोध्याहिं उपाध्याय 'हरिऔध'

### 'प्रियप्रवास' से—

पृ० १—शांतधी = स्थिर बुद्धिवाले। कलानाथ = चंद्रमा। वाटी = बगीचा। विधु-वदन = चंद्रमा के समान मुख वाले। कश्चिन्दावेग द्वारा = किसी आवेग से। मुह्यता = उद्विग्नता। पृ० २—पादांबुज = चरणकमल। पंच-शर = कामदेव। विशिख = बाण। वलित = घिरा हुआ, युक्त, सहित। ईदृशी = ऐसी। आसंग = लगाव, संबंध। पृ० ३—प्रशमित = शांत, नष्ट। अपरा = लौकिक, अन्य, अतिरिक्त। पृ० ४—भूयसी = अत्यधिक। अभिधा = नाम संज्ञा। आदौ = आरंभ में। पतंगोपमाना = पतंग की-सी। द्विरद = हाथी। राका = पूर्णिमा। पृ० ५—हृत्तंत्री = हृदयरूपी वीणा के तार। पृ० ६—कौमुदीकांत = चंन्द्रमा। वारि-स्रावी = जल बहाने वाले, आँसू बहाने वाले। लसित = शोभित। पृ० ७—ओप = चमक, आभा, कांति। कलभ = हाथी का शावक या शिशु। दाड़िम = अनार। विंबा = कुंदरू। गुल्फ = एँड़ी के ऊपर की गाँठ। वह्नि = अग्नि, आग। पखेरू = पक्षी। पृ० ८—इक्षु = ईख। इक्षुता = ईख की मिठास। प्रसृत = विस्तृत। अर्थी = गर्ज़वाला। पृ० ९—भोगाकलित = भोग से भरा हुआ अर्थात् भोग की इच्छा से पूर्ण। पृ० १०—भावतः = भाव से। अंगसंभूत = अंग से उत्पन्न। स्वीय = अपना। इंद्रियातीत = इंद्रिय ज्ञान से परे। पृ० ११—भूरि संख्यावती = बहुत संख्यावाली। प्रथित = विख्यात। स्नेहोपेता = स्नेह से भरा।

### चौपदे—

[ इन पदों में मुहावरों और शब्दों का चमत्कार द्रष्टव्य है ]

पृ० १२—हथेली का आँवला = हस्तामलक अर्थात् पूर्णतः ज्ञात। अजान = ज्ञानहीन। बाना = भेस। माथे का लिखा = भाग्यलेख। पृ० १३—माथे की लकीर—भाग्यलेख। सोत = स्रोत। बौरे = फूले; मदमत्त हुए। बसी = सुवासित। पृ० १४—कटीला = काँटेवाला; दुःखदायी। चुटीला = जिसे चोट लगी हो। जी टँगना = चित्त में ध्यान या चिंता का आना। छाती पर साँप लोटना = दुःख से कलेजा दहलना। बालों की वेणी या लट को उपमा नागिन से दी जाती है। पृ० १५—मार्खे = अमर्ष, अप्रसन्नता। कौल = कमल। आग में चमेली खिलाना, हथेली पर बाल

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जमाना = असंभव को संभव करने की असफल चेष्टा। थिर = स्थिर। का का पुतला = जड़वत। ललकतों = चाह की उमंग से भरे हुए।

## मैथिलीशरण गुप्त

### कैकेयी का अनुताप—

पृ० १६—विधुलेखा = चंद्रलेखा, चंद्रमा की कांति। वैधव्य····· विधु-लेखा = वैधव्यरूपी तुषार से आवृत चंद्रकला। गामुखी = हिमालय का वह स्थान जहाँ से निकलकर गंगा की धारा नीचे गिरती है। वह सिंही·····गोमुखी गंगा = क्षत्राणी कैकेयी, जो सिंहनी के समान गर्व से मस्तक ऊँचा रखने वाली थी वह अब मुख झुकाए दीन गाय की तरह थी। उल्का = टूटा हुआ तारा। पृ० १८—जना = उत्पन्न किया। श्रीखंड = चंदन। चण्ड = प्रचंड, तीक्ष्ण। कुलिश = वज्र। पृ० १९—तोष = तृष्टि, तृप्ति। पंकिला—पंकयुक्त या पंक में रहने वाली। कुहुकिनि = मायाविनी। कुहुक० = मायामोह से वशीभूत राम। पृ० २०—नालंबा = अवलंबनहीन, असहाय। भावज्ञ = भावों का मर्म समझने वाला। पृ० २१—भरत वाक्य = नाटक के अंत में निर्दिष्ट उक्ति, जिसमें अभीष्ट आशंसा का कथन होता है। प्रस्ताव = नाटक का आरंभ।

### उर्मिला-लक्ष्मण-मिलन

पृ० २२—आली = सखी। तन्वंगि = कोमलांगी, दुबली-पतली स्त्री। दग्ध-वर्त्तिका = जली बत्ती। शिखा = लपट, लौ। पृ० २३—पानी = आब, कांति, मान। प्रीति-स्वाती = प्रेम रूपी स्वाती। शुक्ति = सीपी। रीति मुक्ता = मुक्ता की रीति से; प्रेम की रीति रूपी मुक्ता। आलि = सखी। पृ० २४—मनचीते = मनचाहा। शेफाली = निर्गुंडी।

पृ० २५—शुचि-गभीरता = स्वच्छ अगाधता।

पृ० २६—मेरा रोदन···तो मैं आऊँ = मेरी व्यथा मुझे गाने के लिए प्रेरित कर रही है। पर बिना गहरी व्यथा के अनुभव के, संगीत या काव्य की सृष्टि नहीं हो सकती। विशिख-अनी = बाण की नोंक। दृगंबु सनी = आँसू से सनी। उपमोचितस्तनी = ( कठोर ) स्तन के गुण से उपमित होने योग्य।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



**यशोधरा-विरह—**

पृ० २७—तप = तपस्या या ताप । विभूति = भस्म । जठर = कठोर । तप मेरे मोहन का उद्धव = मेरे मोहन ( सिद्धार्थ ) का तप रूपी उद्धव । वाष्प-राशि = आह रूपी बादल । सूने में = शून्य में, हृदय में । शतधा = सैकड़ों रूपों में । पृ० २८—मध्याह्न = यौवन । ठंढी साँसें = निराशा से भरी साँसें । गारूँ = गलाऊँ । छाँह = छाया, आश्रय । खट्टे दिन = अप्रिय दिन या समय । पृ० २९—आशा = दिशा । दिन-मुख = प्रभात ।

**कंस—**

पृ० ३०—आकुंचन = सिकोड़ना । अग्नि-धर्म = आग का धर्म । पादत्राण = पनही, जूता । पृ० ३१—चटुल = चंचल । अब्रह्मण्य = न सुनने योग्य अनुचित बात । मत्स्यन्याय = दुर्बल को पराजित कर या मिटाकर सबल का प्रभुत्व-स्थापन । पृ० ३२—अग-जग = स्थावर-जंगम । पृ० ३३—मिस = बहाना पृ० ३५—क्लिन्न = क्लेदयुक्त । पृ० ३६—भीति = भय, डर । पृ० ३७—अंबर की असि = आकाश की तलवार ( बिजली ) । द्वापर = संशय, दुविधा । अराल = वक्र, टेढ़ा । अप्रत्यय = अविश्वास । अनृत = सत्य ।

## जयशंकर 'प्रसाद'

**श्रद्धा—**

पृ० ३८ — संसृति = संसार । इंद्रजाल = जादूगरी । कुसुम-वैभव = कुसुमों की समृद्धि । पृ० ३९—अनुकृति = अनुकरण, देखादेखी कार्य । मसृण = चिकने । मेष = भेंड़ । वर्म = कवच । इंद्रनील = नीलम । अंस = कंधा । पृ० ४०—स्पर्श के आकर्षण से पूर्ण = जिसे छूने को आकृष्ट हों । लेखा = रेखा, किरण । कांत = प्रिय । भोर की तारकद्युति की गोद = प्रातःकालीन नक्षत्रों के धूँधले प्रकाश में । रचित परमाणु पराग शरीर = पराग रूपी परमाणु से निर्मित । खेला = क्रीड़ा । उल्का = टूटा तारा । पृ० ४१—व्यस्त = उलझा । कलित = भरा हुआ, युक्त । उद्भ्रांत = भटका हुआ । विरस = नीरस । पृ० ४२—नखत = ( अनुकूल ) नक्षत्र । हृदय-सत्ता = मन । पृ० ४३—संभार = आयोजन । विश्रब्ध = सहिष्णु, विनीत, नम्र, निर्भय । भूत-हित-रत = जीवों

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



के कल्याण में लगा हुआ। काम = ( जीवन की ) कामना। पृ० ४४—महाचिति = समस्त विश्व को चेतना प्रदान करनेवाली महाशक्ति। श्रेय = शुभ, श्रेष्ठ। सर्ग = सृष्टि। विषमता = ( सुख-दुःख का ) द्वंद्व। भूमा = अखंड आनंदस्वरूप परमात्मा। समरसता = विषमता का विलोम, दुःख सुख की समरसता। कारण = हेतु। जलधि = सृष्टिरूप समुद्र। पृ० ४५—तप = संसार से विराग। निर्मोक = केंचुली। किये हैं परिवर्तन में टेक = परिवर्तन में आश्रय लेती है। पृ० ४६—यजन = यज्ञ करने की क्रिया। उत्सर्ग = समर्पित। पृ० ४८—उत्स = स्रोत।

**वे कुछ दिन कितने—**

पृ० ४९—छाया = प्रतिबिंब। सुरधनु-रंजित···अधर थे = जब सुरधनु-रंजित नव-जलधर से भरे हुए और क्षितिज तक फैले हुए आकाश का चुंबन सरिता के अधर ( युग हरित कूल ) करते थे। ( वे कुछ दिन = प्रेम के दिन = कितने सुंदर थे )। प्राण-पपीहा = प्राणरूपी पपीहा। प्राण-पपीहा·····हरियाली = पपीहे का स्वर जिस प्रकार चढ़ाव-उतार से युक्त होता है उसी प्रकार के उतार-चढ़ाव वाली अर्थात् लहराती हुई हरियाली। चित्र खींचती···थे = मेघ पट पर अंकित बिजली के चित्रों में मुझे अपने हृदय स्थित स्मृति के चित्र खिले हुए दिखाई देते थे।

**ले चल वहाँ भुलावा देकर—**

पृ० ५०—नाविक = केवट; मन या आत्मा। अंबर = आकाश। विभुता विभु-सी···बनी रे = दुःख सुखमय व्यापक प्रसार, जिसे हम विश्व कहते हैं—सत्य रूप में दिखाई पड़े।

**हे सागर संगम···—**

पृ० ५१—हे सागर···नील = जहाँ अरुण और नील दो शोभाएँ दिखाई देती हैं। पिंगल = पीली, सुनहली। मधु-लेखा सी = माधुर्य रेखा के समान। हिम-शैल बालिका = नदी। खील = लावा। देवलोक = हिमालय। सलील = क्रीड़ायुक्त।

**अशोक की चिंता—**

पृ० ५२—विजित = जीता हुआ। पृ० ५३—महादंभ का दानव = विजय। तुरंग = घोड़ा; चित्त। श्लथ = शिथिल। मन-कुरंग = मन रूपी

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



मृग। निषंग = तरकश। जड़ = सूर्य चंद्र आदि। पृ० ५५—झिलना = घुल-घुल कर मरना। अनुलेप = मलहम।

### आँसू—

पृ० ५७—दुर्दिन = मेघाच्छन्न दिन; बुरे दिन। झंझा = आँधी पानी; वेदनापूर्ण भावों का प्रबल वेग। बिजली = विद्युत; कसक; पीड़ा। नीरदमाला = बादलों का समूह; निराशापूर्ण अंधकार। मधुराका मुस्क्याती थी = तारुण्य की आह्लादकारिणी आभा। पृ० ५८—पतझड़..... खड़े थे = तुमसे मिलन के पूर्व मेरा जीवन अत्यंत नीरस और ठूँठे वृक्ष सा शुष्क था। क्यारी = जीवन-वाटिका की क्यारी। पृ० ५९ –लावण्य शैल = सौंदर्य का पर्वत अर्थात् अपरिमेय सौंदर्य।

## सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

### भर देते हो—

पृ० ६०—चारों ओर दुःख से घिरे इस जीवन को अपनी करुणा के स्पर्श से व्यथाहीन बनाकर सुख से भर देने वाली सत्ता के प्रति कवि के कृतज्ञ हृदय के उद्‌गार।

### मौन रही हार—

पृ० ६१—अलक्ष्य प्रियतम से मिलन के लिए प्रियपथ पर अग्रसर होते हुए साधक की मनःस्थिति का शृंगार-मंडित अभिसारिका की मनःस्थिति के रूप में वर्णन।

### भावना रंग दी तुमने प्राण—

पृ० ६२—[ सरस्वती या काव्यशक्ति के आने पर कवि उसके प्रभाव का वर्णन करते हुए कृतज्ञता प्रकट कर रहा है। ]

प्राण = काव्यशक्ति। सौरभ-ज्ञान = सुगंधरूपी ज्ञान। बात = चर्चा। पलक पात = पलकों का गिरना। कर-दान = किरणों का दान।

## धारा

पृ० ६३—कुंजर = हाथी। पृ० ६४—भूधर = पर्वत। चय = समूह।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



**कौन तुम शुभ्र किरण-वसना—**

पृ० ६५—कुंचित-ऋजु = टेढ़ी-सीधी। सुकृत पुंज-अशना = पुण्य समूह जिसके जीवन का आधार है। अनृत = असत्य। अनय = अनीति, अन्याय।

**संध्या-सुंदरी—**

[ संध्या का विराट और प्रभाववादी चित्र। अमूर्त्त को मूर्त करने का प्रयास। ]

पृ० ६८—विहाग = एक राग।

**बादल राग—**

पृ० ७०—अनर्गल = निरर्गल, निरंकुश। पृ० ७१—प्रभंजन = प्रचंड वायु। अयुत-कर-किंकर = दस हजार हाथ वाला अर्थात् सहस्र-किरण सूर्य तुम्हारे सामने सेवक बना शीश झुकाता रहता है। पवि=वज्र।

## सुमित्रानंदन पंत

**प्रार्थना—**

पृ० ७२ - [ ईश्वर की प्रार्थना बादल के रूपक द्वारा ]

उर्वर = उपजाऊ। अव्यय = कभी कम न होने वाला। स्मिति स्वप्न अधर पलकों में, उर अंगों में सुख यौवन = यहाँ क्रमालंकार है। अर्थ यों होगा—हे बादल रूप प्रभु! तुम प्राणियों के अधरों में स्मिति, पलकों में मधुर स्वप्न, हृदय में आनंद और अंगों में यौवन की प्रत्यग्रता और स्फूर्ति भर दो। मृण्मरण = वध और मृत्यु।

**पर्वत प्रदेश में पावस—**

पृ० ७३—मेखलाकार = करधनी के समान चारों ओर से घेरा बनाने वाला पर्वत। पारद = पारा। अंबर=आकाश। पृ० ७४—चमत्कृत = चमत्कृत करने वाला।

**'आँसू' से—**

[ 'आँसू' शीर्षक कविता के कुछ अंश यहाँ संकलित हैं। इन अंशों में कवि ने विरहदशा में अपनी कल्पनामयी प्रेयसी बालिका के प्रति अपने वियोगजन्य उद्‌गार व्यक्त किए हैं। ]

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



पृ० ७७—विरह···अवसान है = कवि कहता है कि इसे मैं विरह समझूँ या वरदान ! मेरी कल्पना में तो कसकती हुई पीड़ा भरी है और आँसुओं में जीता-जागता सिसकी भरता संगीत है। सूनी आहें सुरीले छंदों का रूप धारण कर लेती हैं। इस विरहवेदनामय संगीत की निरंतरता कभी टूटती नहीं। अरुण कलियों से···असहाय = विरह-व्यथा के पुराने घाव ( कसकती हुई स्मृति ) उसी प्रकार ताजे हो जाते हैं जिस प्रकार वर्षा काल में लाल-लाल कलियाँ निकल आती हैं। पृ० ७८—अनिल = वायु। प्रवाल = मूँगा। तमिस्र = अंधकार। पृ० ७९—कुमुदकला = यहाँ यह शब्द चंद्रकला या चंद्रमा के लिए प्रयुक्त है। पृ० ८०—मरुत रखवाल = वायु रूपी चरवाहा। वेणु = वंशी या बाँस। मेमने = बकरी के बच्चे। द्विरद दंत = हाथी के दाँत। कर = सूँड। कर-सीकर = सूँड से छोड़ा हुआ फव्वारा। भूति = वैभव या कीर्ति। परिकर = कमरबंद वस्त्र। द्विरददंतों से···गजवर = बादल कभी हाथी के सफेद दाँतों की तरह ऊपर उठे दिखाई देते थे और कभी उन्हें देख ऐसा लगता था मानों कोई हाथी अपने सूँड से जल का फौव्वारा छोड़ रहा हो। कभी वे टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाते थे। देखकर प्रतीत होता था मानों किसी की उज्ज्वल कीर्ति फैलकर शोभित हो रही हो। कभी उनका रूप हाथी की कमर पर बाँधे जाने वाले सफेद वस्त्र की तरह हो जाता था। इस प्रकार पर्वतीय बादल अनेक रूप धारण करके उस पर्वत को हाथी के आकार का बना देते थे। इन्द्रधनु की टंकार = बादलों की हल्की गर्जन मानों इंद्रधनुष की टंकार है। चपला = बिजली। विशिख = बाण। [ चित्र इस प्रकार है = थोड़ी-थोड़ी बिजली चमक उठती थी। उधर बादल भी धीमे-धीमे गरज रहे थे। वर्षा हो रही थी पर सनसनाता हुआ हवा का झोंका चलने पर वर्षा बंद हो जाती थी। कवि कहता है कि ऐसा लगता था मानों बिजली के छोटे-छोटे चंचल बच्चे इंद्रधनुष की टंकार और वर्षा रूपी बाणों की बौछार से भयभीत हो, उचककर पर्वत के उस पार चले जाते थे ( छिपने के लिए )। तब शीघ्रता से वायु उनको पुकारने लगता था ( कि डरो मत ) और फिर जलवर्षा रूपी बाणों की बौछार को रोक देता था। ] अचलके···वे विमल विचार = बादल मानों पर्वत के विचार हों। विपुल व्यापकता···सत्वर = निर्विकार शून्य में बादल विलीन हो जाते थे।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



पृ० ८१—आरंभिक आठ पंक्तियों में नाद-व्यंजना द्रष्टव्य। पीन = पुष्ट, ऊँची। झीनी = पतली। घहर = गर्जन। बिंदुओं = जलबिंदुओं। शैल-पावस के प्रश्नोत्तर = उपरिवर्णित सब ध्वनियाँ या शब्द मानों पर्वत और वर्षा ऋतु के बीच होने वाले प्रश्नोत्तर हैं। शैल की सुधि = भूत-काल में जब कवि अपनी प्रिया के साथ वर्षाकालीन पर्वतीय शोभा निरखता था उन दिनों के शैल की स्मृति। यहाँ शैल की शुद्धि का मानवीकरण किया गया है। पलक पल पल चपला के मार = जो पल पल पर बिजली का चमकना है वह मानो पर्वत की सुधि रूपी सुंदरी का पलक मारना है।

**नौका विहार—**

प्रकृति के आह्लादकारी दृश्य का सजीव चित्रण और अंतिम अंश में उसका दार्शनिक पर्यवसान द्रष्टव्य।

पृ० ८२—सैकत = बालू। तन्वंगी = क्षीण दुबली-पतली। ग्रीष्म-विरल = ग्रीष्म से पतली। तार = स्वच्छ। तरल = हिलने वाला। सिकता की सस्मित सीपी = मुस्कताती अर्थात् खुली सीपी। कुंतल = बाल। वर्तुल = गोलाकार। सत्वर = शीघ्र। निर्भर = पूर्ण। प्रमन = प्रसन्न। पृ० ८३—चल = चंचल। अंतस्तल = हृदय अर्थात् भीतरी भाग। अविरल = एक में मिली हुई। कल = सुंदर। कच = बाल। तिर्यक = तिरछा। दो बाहों से = दो बाहों के सदृश। अराल = वक्र, मुड़ी हुई। प्रतीप = टेढ़ा। प्रतनु = हल्का। मुक्ताफल = मोती। स्फार = विपुल। तार-हार = मोतियों का हार। पृ० ८४—चल = द्रुतगति। उडु = नक्षत्र, तारे। जीवन का उद्गम = जीवों की उत्पत्ति या सृष्टि। संगम = मिलन।

**चाँदनी—**

पृ० ८५—नभ के = नभ रूपी। शारद हासिनी = शरद ऋतु की भाँति स्वच्छ हँसी वाली। मृदु करतल = किरणरूपी हथेली। स्वप्न-जड़ित = स्वप्नों से जड़ी हुई (रात में लोग स्वप्न देखते हैं।) अग जग = चराचर। कुड्मल = कली। दिशि-दल = दिशारूपी पत्तियाँ। साँसों में स्तब्ध समीरण = रुक रुक कर चलने वाली मंद वायु ही उसकी साँस है। पृ० ८६—दुलहिन बत्त = पूर्णतः प्रकाशित न होती हुई। निभृत = एकांत। शयन = शय्या। ओसों का अंचल = ओसरूपी आँसुओं से भरा हुआ। लघु = सूक्ष्म। परिमल = सुगंध। घन = बादल।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I



अनिल = वायु । अविकल = पूर्णतः । स्वप्निल = स्वप्न से भरी । शयन मुकुल = फूल की शय्या । जग का अलि = संसार रूपी भौंरा । पृ० ८७—संसृति = सृष्टि । शब्दमुक्त शुचि आशय = कोलाहलहीन आत्मा का स्थान । आशय = स्थान । अनिर्वच = वर्णन से परे । साकार चेतना सी वह जिसमें अचेत जीवाशय = चाँदनी ब्रह्म की व्यापक चेतन सत्ता के समान है जिसमें जड़ प्रकृति अचेत हो पड़ी हुई है ।

**तितली—**

पृ० ८८—रंगिणि—रंग आमोद नृत्यमयी । शत रत्न-छाय = सैकड़ों रत्नों की आभा के पारस्परिक मिश्रण से युक्त । पृ० ८९—चित्रिणि = नाना रंगों से चित्रित या रंगी हुई ।

**सोनजुही—**

पृ० ९२—दारु = लकड़ी । भुजगी = सर्पिणी । पृ० ९३—पल्लव-देही = पल्लव की मूँगिया लाली और मसृणता से युक्त शरीर वाली । गरारा = घाघरा । उद्भिद् = वनस्पति, पेड़ पौधे । पृ० ९४—रीढ़स्तंभ का ले अवलंबन··· = जैसे मनुष्य की कुंडलिनी मेरुदंड का आश्रय लेकर ऊर्ध्वमुख आरोहण करती है उसी प्रकार यह वेलरूपी चेतना लकड़ी का सहारा लेकर ऊपर चढ़ रही है । अचेतन का तम = अचेत पृथ्वी का जड़तारूपी तम; अचेतन मन का अज्ञान । प्रकाश = अरविंद-दर्शन में 'प्रकाश' समष्टि वैश्व दिव्य जीवन का प्रतीक है । पृ० ९५—त्याग जन सारथि अभिमत = त्याग मनुष्य का अभीप्सित सारथी बन सके ।

## महादेवी वर्मा

[२] घन केश-पाश = बादल रूपी बालों का पुंज । लास = नृत्य । चल = चंचल । दुकूल = वस्त्र । स्वर्णफूल = दुपट्टे में टँके सलमा-सितारे । बक = बगुला । केकी = मोर । स्निग्ध = चिकना और मुलायम ।

(३) रश्मिवलय = किरणों की चूड़ियाँ । मुक्ताहल = मोती । तरल रजत = द्रवीभूत चाँदी की भाँति चाँदनी ।

[ ४ ] दर्पण = माया का दर्पण । बिंबग्राहकता = बिंब को ग्रहण करने की क्षमता । अभिसार = मिलन । अपनापन = अहंभाव । कुंतल = केश ।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M



[५] प्राचीर = घेरा या चहारदीवारी। इस गीत में समीम जग में बँधी जीवात्मा की प्रबल मुक्ति-कामना विभिन्न रूपों में व्यंजित है।

[६] स्वतंत्रता-संग्राम के लिए नवयुवकों का आह्वान इस कविता का केन्द्रीय भाव है। उपधान = तकिया, सहारा।

[७] मरकत = पन्ना। संपुट = डिब्बा। संसृति = सृष्टि।

[८] तरणी = नौका, नाव। झंझावात = तेज आँधी, तूफान। सार्थवाही = व्यापारी। याम = पहर।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: I

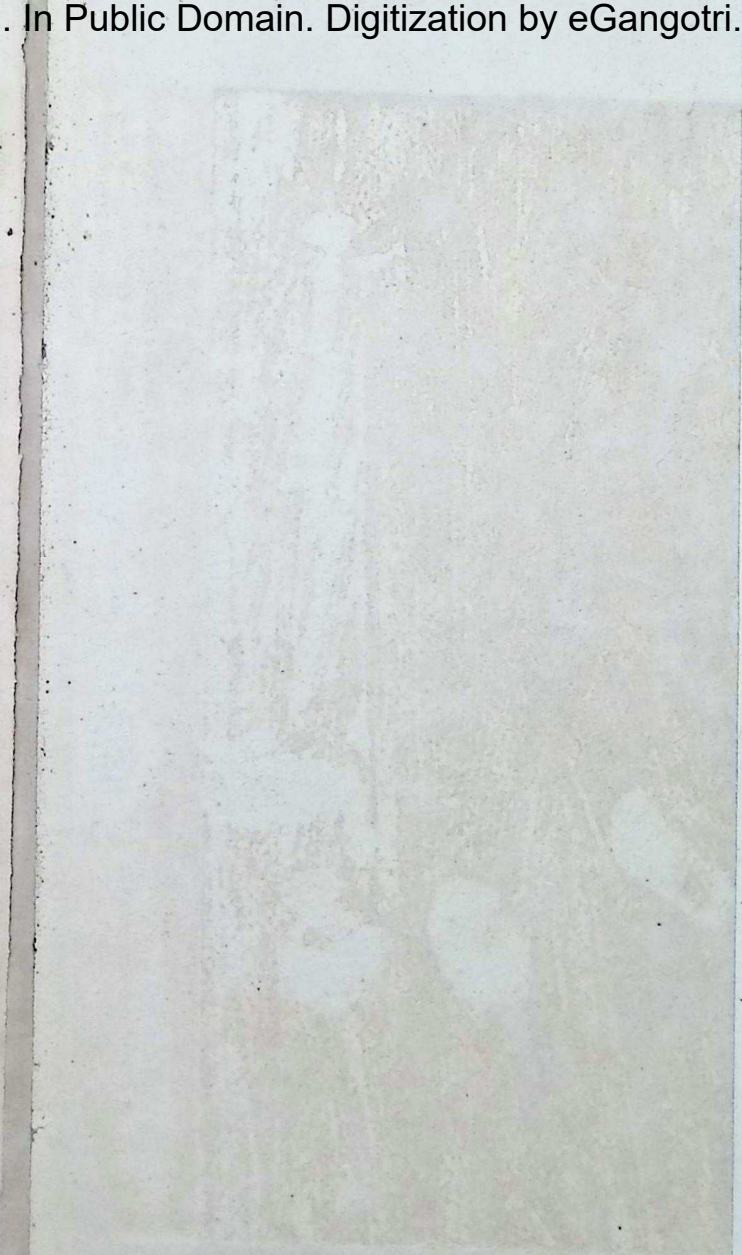

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu